प्रभात

अन्दर के पन्नों पर .....

★ इराकी जनता के शानदार प्रतिरोध को लाल सलाम... 2
★ इराक पर अमेरिकी हमला - मानवता पर हमला... 6
★ अमेरिकी साम्राज्यवाद के दिल में हड़कंप ... 13
★ अबू ग़रेब जेल में इराकियों पर अत्याचार... 23
★ एन्ना लुईस स्ट्रोंग के साथ माओ की बातचीत ... 25
★ नेपाल में जारी जनयुद्ध का भरपूर समर्थन करो ... 27
★ असेम्बली बमकाण्ड पर भगत सिंह का बयान ... 29
★ कॉमरेड साकेत राजन को लाल सलाम ... 32
★ छत्तीसगढ़ की औद्योगिक नीति (2004-09) पर ... 33

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) दण्डकारण्य स्पेशल ज़ोनल कमेटी का तिमाही मुख-पत्र

साम्राज्यवाद विरोधी विशेषांक

वर्ष - 18 | अंक - 1 | जनवरी-मार्च 2005 | सहयोग राशि - 10 रुपए

साम्राज्यवाद मुर्दाबाद !

इन्कलाब जिन्दाबाद !!

दुनिया भर में साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ाई तेज करो !

इराकी जनता के शानदार प्रतिरोधी संघर्ष को लाल सलाम !!

हाल ही में इराक में चुनाव का नाटक सम्पन्न हुआ। साम्राज्यवादी मीडिया के अनुसार लोगों ने चुनाव में "बड़ी संख्या में उत्साह के साथ" भाग लिया। इस चुनाव को लोकतंत्र की जीत के रूप में पेश किया गया। इस चुनाव के परिणाम भी आ गए हैं। शियाओं की पार्टी को अत्यधिक प्रतिशत वोट मिले हैं। अरसे से धर्मनिरपेक्ष देश रहे इराक का अब काया-पलट होने जा रहा है। अमेरिकी सेनाओं की मौजूदगी में वह एक इस्लामी देश के रूप में उभरने जा रहा है। दूसरी तरफ इराकी चुनाव से दो महीने पहले अमेरिका में भी चुनाव हुआ था। राष्ट्रपति बुश दोबारा जीत गया। पिछली बार जॉर्जिया राज्य में हुई धांधलियों के सहारे जीता था तो इस बार ओहियो में। दुनिया का सबसे ताकतवर मुल्क कहलाने वाले अमेरिका के लोकतंत्र की धज्जियां फिर एक बार उड़ गईं। दोबारा चुनाव जीतने की खुशी से फूले न समाते हुए जॉर्ज बुश ने इराक में अपना हमला तेज किया। फलूजा शहर में बेकसूर लोगों की लाशों का ढेर लगा दिया। इरान और सीरिया के खिलाफ हमले की धमकियां तेज कर दीं। दूसरी तरफ उसने नेपाल में माओवादियों के नेतृत्व में जारी जनयुद्ध को कुचलकर नेपाल को कम्युनिस्टों के हाथों में जाने से बचाने की बीड़ा भी उठा लिया है। कुल मिलाकर कहा जाए, तो उत्पीड़ित जनता और उत्पीड़ित राष्ट्रों पर साम्राज्यवाद के सरगना अमेरिका का हमला तीखा हो गया। इसके खिलाफ जनता का संघर्ष भी जारी है। अमेरिकी साम्राज्यवाद इन तमाम हमलों के बावजूद अपनी अर्थव्यवस्था को घोर वित्तीय संकट से उबारने में बुरी तरह नाकाम हो रहा है। उसे हर जगह जन प्रतिरोध का सामना करना पड़ रहा है।

> ***"हर मनुष्य को अपनी मेहनत का फल पाने का पूरा अधिकार है और हर राष्ट्र अपने साधनों का पूरा मालिक है। यदि कोई सरकार उन्हें उनके इन बुनियादी अधिकारों से वंचित रखती है तो लोगों को अधिकार है – नहीं, यह उनका कर्तव्य है कि ऐसी सरकार को उलट दें, मिटा दें।"***
>
> **– भगत सिंह**

अर्थनीति की केन्द्रीकृत अभिव्यक्ति है राजनीति; और युद्ध का मतलब राजनीति को दूसरे रूप में जारी रखना ही है। गहराता संकट, खासकर अमेरिका का संकट बाजारों और कच्चा मालों के स्रोतों के लिए एक तीखी स्पर्धा का कारण बन रहा है जिसका परिणाम ही है इराक युद्ध जो कि तेल पर कब्जे के लिए हो रहा है। युद्ध और आक्रमण की इस तरह की राजनीति से ही उत्पन्न होता है बुश शासन जैसा बेहद फासीवादी शासन।

'लोकतंत्र' के केन्द्रस्थल में ढोंगबाजी

अफ्रीकी-अमेरिकी मतदाताओं को मताधिकार से वंचित करना, इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों से छेड़छाड़, लातिनी अमेरिका की आप्रवासी आबादी की भारी संख्या को 'अवैध' घोषित करना, टीवी के जरिए व्यापक प्रचार – यही है अमेरिकी चुनाव का सारांश। फिर भी, लोगों के लिए यह कड़ी टक्कर वाले चुनावों में एक था। एक तरफ विशाल जनता ने, जिसे बुश सरकार से नफरत थी, एक सही विकल्प के अभाव में यह आह्वान किया था कि "कोई भी मगर बुश को नहीं।" दूसरी तरफ ईसाई संप्रदायिकतावादी बॉर्न अगेइन क्रिश्चियन्स, जिनकी संख्या आबादी का 20 प्रतिशत है, ने बुश के लिए आक्रामक प्रचार किया। उन्होंने समलिंगी विवाहों का विरोध जैसे गौण मुद्दों को उठाकर, "पारिवारिक मूल्यों" को मंच बनाकर उन्मादपूर्ण प्रचार अभियान चलाया। इस बार चुनाव में मतदाताओं ने अत्यधिक संख्या में अपने मताधिकार का प्रयोग किया। ऐसा इसलिए क्योंकि एक तरफ चर्च के मंच से इसाई साम्प्रदायिक तत्व खड़े थे तो दूसरी तरफ एक मजबूत बुश-विरोधी, युद्ध विरोधी और फासीवाद-विरोधी खेमा था जिसके सामने बुश के खिलाफ वोट डालने के अलावा कोई चारा नहीं था - इसके बावजूद भी कि जॉन केर्री कोई बेहतर विकल्प नहीं था। आश्चर्य की बात है कि जब सारी दुनिया में लोग बुश की नीतियों का कड़ा विरोध कर रहे थे, तब भारत सरकार (भाजपा ही नहीं, बल्कि कांग्रेस भी) बुश के समर्थन में खुलकर आगे आई।

सबसे पहले मुख्य प्रतिस्पर्धियों के बीच फर्कों पर नजर डाली जाए जिन्होंने अपने चुनाव प्रचार में कुल मिलाकर भारी भरकम 4 अरब डॉलर (18,000 करोड़ रुपए) खर्च किए जोकि अभूतपूर्व था। इसमें चुनाव कराने के लिए सरकार द्वारा किया गया खर्च शामिल नहीं है, बल्कि यह पूरा निजी दाताओं से वसूला गया पैसा था। इराक, फिलिस्तीन, इरान, उत्तर कोरिया जैसे मुद्दों पर इन दो उम्मीदवारों में कौन ज्यादा युद्ध-पिपासु है यह कहना मुश्किल था। दरअसल केर्री ने इराक में 40,000 सेनाएं और भेजने, अमेरिका की स्थायी सेना का विस्तार करने, जमीनी लड़ाई के लिए हथियारों पर 6 अरब डॉलर ज्यादा खर्च करने तथा उत्तर कोरिया, सीरिया और इरान के प्रति कठोर रुख अपनाने पर जोर दिया था। अबू ग्रेब और ग्वान्टेनामो खाड़ी के जेलों में हुए अत्याचारों पर तथा इराक पर युद्ध शुरू करने के बाद से अब तक एक लाख इराकियों की हत्या पर उसने एक शब्द भी नहीं कहा। केर्री ने बार-बार दोहराया कि अगर उसे यह मालूम होता कि सद्दाम के पास सामूहिक विनाश के हथियार नहीं थे, फिर भी इराक पर आक्रमण का वह समर्थन करता। उसने फासीवादी पेट्रियाट कानून को वोट डाला था और 'सीरिया जवाबदेही कानून' का सह-प्रायोजन किया। इस कानून ने बुश को सीरिया पर प्रतिबन्ध थोपने का अधिकार दिया। फिलिस्तीन के सवाल पर इज्राएल के फासीवादी प्रधानमंत्री एरियाल शेरोन के प्रति केर्री का असीमित समर्थन रहा है। इस मसले पर बुश और केर्री के बीच कोई फर्क नहीं था। यहां तक कि स्थानीय मुद्दों पर भी इनके बीच फर्क के साये भर थे। ऐसे में कोई आश्चर्य की बात नहीं कि इनके चुनाव प्रचार का सारा खर्च देश के बड़े-बड़े पूंजीपतियों ने उठा लिया। इसलिए, सहज ही निचले स्तर पर गर्भपात और समलिंगी विवाह जैसे मुद्दों पर तो उनके बीच फर्क दिखाई दिया, लेकिन अहम मुद्दों पर उनके बीच फर्क न के बराबर था। सबसे बड़े आश्चर्य की बात यह है कि ओहियो की मतगणना के दौरान जब इन दोनों उम्मीदवारों के बीच कांटे की टक्कर चल रही थी, जहां के 51 प्रतिशत पुरुषों और 53 प्रतिशत महिलाओं ने केर्री के पक्ष में मतदान किया, केर्री ने मतगणना खत्म होने से पहले ही पराजय स्वीकार ली। आखिरकार, बुश ओहियो में महज 1,36,500

वोटों से जीत हासिल की, जबकि बाद में यह पता चला कि दरअसल 2.5 लाख मतों को गिना ही गया था! केर्री ने जब बुश की जीत स्वीकार की तो मतों की गणना में बड़े पैमाने पर हुई धांधलियों की जांच की मांग पर भी पूर्ण विराम लग गया।

कई लोगों को उम्मीद थी कि केर्री मतदान में हुई धांधलियों और 2.5 लाख मतों के गायब होने पर जांच की मांग करेगा। देश भर में हजारों वकील इकट्ठे हो गए ताकि जांच की मांग की जा सके और मतदान की धांधलियों और धमकियों के प्रति विरोध प्रकट किया जा सके। लेकिन केर्री ने ठीक वैसा ही किया जैसे पूर्व में अल गोर ने किया था। जार्ज बुश के जीत के दावों को उसने कबूल किया। उसके सारे समर्थकों में भ्रम और असन्तोष फैल गए। केर्री ने अपने समर्थकों से कहा, ''आने वाले दिनों में, हमें एक साझा लक्ष्य के साथ चलना होगा, बिना किसी निष्ठुरता और प्रत्यारोप के, और बिना किसी गुस्सा और विद्वेष के।''

अब हमें इस बात पर गौर करें कि मतदाताओं के मताधिकार का कैसे हनन किया गया। जाहिर सी बात है काले और लातिनी लोगों का एक बड़ा हिस्सा डेमोक्रटों को ही वोट डालेगा। लेकिन इनमें से अत्यधिक लोगों को वोट डालने से वंचित रखा गया। सबसे पहले तो जेलों में करीब 20 लाख लोग बन्द हैं जिनमें से ज्यादातर अश्वेत ही हैं। इसके अलावा, एक अनुमान है कि जिन मतपेटियों पर ''खराब'' का ठप्पा लगाया गया उनमें आधी से ज्यादा अफ्रीकी-अमेरिकियों की थीं। दूसरे शब्दों में कहें तो करीब 10 लाख काले वोटों को राष्ट्रीय चुनावों में कभी नहीं गिना जाता है। इसका मतलब है हर 7 काले मतदाताओं में से एक को, यानी 14 प्रतिशत काले मतदातों को गिनती से निकाल बाहर किया जाता है।

तीसरा, यह जगजाहिर है कि इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों के लिए रिपब्लिकन पार्टी के कट्टर समर्थक व्यापारियों को ऑर्डर दिया गया था। जहां-जहां इन मशीनों का प्रयोग किया गया, वहां पर बुश को अत्यधिक मत मिले। चूंकि इनका ठीक से परीक्षण नहीं हुआ, इसलिए इनकी जांच करना या दोबारा मतगणना करना मुश्किल है। इन मशीनों का निर्माण करने वाली पांच कम्पनियों में कम से कम दो का घनिष्ठ सम्बन्ध रिपब्लिकन पार्टी से है। इसके अलावा मतगणना में इस्तेमाल किए गए कम्प्यूटरों का निर्माण भी उन लोगों ने किया जो रिपब्लिकन पार्टी के साथ जुड़े हुए हैं। स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डेविड डिल ने अमेरिका के वैज्ञानिकों की एक बैठक को सम्बोधित करते हुए कहा, ''अमेरिकी जनता जिन मशीनों में वोट डाल रही है वे काफी असुरक्षित हैं। मैं नहीं समझता कि इन मशीनों पर यकीन करने में कोई तुक है।'' करीब 1600 कम्प्यूटर विज्ञानियों ने एक याचिका पर दस्तखत की जिसमें यह मांग की गई कि जब तक इन इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों की सही ढंग से जांच नहीं होगी तब तक इनके इस्तेमाल पर रोक लगाई जाए।

इससे यह साफ हो जाता है कि जिस प्रकार बुश और उसके गिरोह ने वर्ष 2000 में धांधलियां बरतकर चुनाव जीता था, ठीक उसी को दोहराते हुए इस बार भी चुनाव जीता। मतदान और मतगणना में की गई धांधलियों के अलावा लोगों को दिमागी तौर पर असुरक्षा की स्थिति में धकेलने के लिए बुश सरकार ने मीडिया पर करीब 4 अरब डॉलर खर्च किए। इसके जरिए बुश ने अमेरिकियों में भय का माहौल पैदा किया और आतंकवाद के खिलाफ अंधराष्ट्रवाद की भावनाएं पैदा कीं। बुश को वोट देने वाले 6 करोड़ लोगों में से 86 प्रतिशत लोगों ने स्वीकार किया कि 'आतंकवाद' ही उन्हें प्रेरित किया था। चर्च ने भी ईसाई साम्प्रदायिकता को भड़काते हुए यह प्रचार किया कि यह हत्यारा बुश ''नैतिक मूल्यों'' का रक्षक है। कु क्लुक्स क्लान जैसे कट्टर दक्षिणपंथी फासीवादी संगठनों ने गर्भपात, समलिंगी विवाहों जैसे मुद्दों को लेकर जनता में उन्मादपूर्ण प्रचार चलाया। हालांकि केर्री को 5 करोड़ 54 लाख मतदाताओं ने वोट डाला, पर चूंकि युद्ध और अर्थव्यवस्था के बारे में उसने बुश से हटकर स्पष्ट रूप से कुछ नहीं कहा था, इसलिए यह मुकाबला पहले ही नीरस बन चुका था। दोनों उम्मीदवार अमेरिकी साम्राज्य को अमेरिकी कॉर्पोरेट जगत् के हितों के अनुकूल ही चलाने को प्रतिबद्ध थे। हालांकि अमेरिकी कार्पोरेट जगत् ने, खासकर शक्तिशाली तेल और रक्षा लॉबियों ने बुश का समर्थन किया क्योंकि उसके साथ उनके घनिष्ठ सम्बन्ध हैं।

अर्थव्यवस्था हाशिए पर

इस वर्ष 3 प्रतिशत से ज्यादा वृद्धि और शेयर बाजार की कीमतों में बढ़ोत्तरी का हवाला देते हुए प्रचारक अर्थव्यवस्था में सुधार के दावे भले ही कर रहे हों, पर यह सब को मालूम है कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था हाशिए पर है। न सिर्फ डालर के मूल्य में गिरावट और व्यापार व बजट में भारी-भरकम घाटे से, बल्कि बेरोजगारी और गरीबी में व्यापक बढ़ोत्तरी से बगावत के लिए अनुकूल स्थिति निर्मित हो रही है। अमेरिका के इतिहास में अमीरों और गरीबों के बीच खाई इतनी व्यापक कभी नहीं थी जितनी पिछली सरकार के दौरान बन गई।

बड़े पूंजीपतियों के मुनाफे सकल घरेलू उद्योग में 8 प्रतिशत रहे जो पिछले 70 सालों में सबसे अधिक है। दूसरी तरफ पिछले 75 सालों में ऐसा पहली बार हुआ है कि एक राष्ट्रपति के शासनकाल के दौरान रोजगार में कुल वृद्धि कुछ भी नहीं हुई। बुश के शासनकाल में सभी उत्पादन क्षेत्र की नौकरियों में 15 प्रतिशत कटौती हुई। चार साल पहले के मुकाबले अब नौकरियां 10 लाख कम हैं। 50 लाख लोग स्वास्थ्य बीमा पर खर्च नहीं कर सकते। पिछले चार सालों में 2 प्रतिशत ज्यादा अमेरिकी गरीबी रेखा के नीचे चले गए। ये रहे कुछ आंकड़े जो गरीबों और अमीरों के बीच की खाई को साफ तौर पर दर्शाते हैं और जिन्हें बुश सरकार ने प्रोत्साहित किया है। अब बुश इसी को दोहराने का वादा कर रहा है। अमेरिकी कॉर्पोरेट जगत् ने रोजगार और वेतन में वृद्धि पर कड़ा अंकुश लगा रखा है। सभी किस्म का सस्ता श्रम, जेल श्रम और अवैध आप्रवासियों के श्रम को ज्यादा बढ़ावा दिया जा रहा है। परिणामस्वरूप मजदूरों को मिलने वाली आय का हिस्सा सबसे कम स्तर पर पहुंच चुका है।

अगर हम अर्थव्यवस्था पर गौर करें तो पाएंगे कि जहां 2001 के बजट में 100 अरब डॉलर की बचत थी वहीं मौजूदा साल में 514 अरब डॉलर का घाटा है। इसका एक कारण युद्ध पर किए गए भारी-भरकम खर्च और सैन्य बजट में की गई बढ़ोत्तरी है, तो दूसरा कारण करों में की गई भारी कटौतियां है जिसका फायदा मुख्य रूप से अमीरों को मिल रहा है। अब तक इराक युद्ध पर 200 अरब डॉलर खर्चे जा चुके हैं और इसमें काफी बढ़ोत्तरी होने की पूरी सम्भावना है क्योंकि इराक में प्रतिरोध बढ़ रहा है और उसके दोस्त जंगे मैदान छोड़ भाग रहे हैं। 2004 में करों में बुश द्वारा की गई कटौतियों से सालाना 12 लाख डॉलर से ज्यादा कमाने वाले 1 प्रतिशत अमेरिकियों को भारी-भरकम 78,460 डॉलर का फायदा

होगा, जबकि सालाना 16,620 डॉलर कमाने वाले 20 प्रतिशत अमेरिकियों को महज 250 डॉलर का फायदा होगा। बुश ने करों में कटौती की यह नीति जारी रखने का वादा किया।

डॉलर का मूल्य लगातार गिरता जा रहा है। इससे डॉलर को यूरो से चुनौती बढ़ रही है। इराक पर आक्रमण के बाद से यूरोपियाई मुद्रा यूरो की तुलना में डॉलर के मूल्य में 35 प्रतिशत गिरावट आई है। लेकिन अमेरिकी प्रचारतंत्र यह कह रहा है कि डॉलर के मूल्य में गिरावट से अमेरिकी निर्यात बढ़ जाएंगे। लेकिन ऐसा जब यूरो के मामले में हुआ तो उसने यह कहकर खिल्ली उड़ाई थी कि वह एक कमजोर मुद्रा है। डॉलर के मुकाबले यूरो फिलहाल ज्यादा स्थिर दिखाई दे रहा है। इससे अमेरिकी साम्राज्यवाद पर भुगतान संतुलन के संकट का खतरा मंडरा रहा है। डालर के मूल्य में गिरावट के बावजूद भी, अक्टूबर 2004 में अमेरिका का व्यापार घाटा 55.5 अरब डॉलर तक बढ़ गया जोकि अब तक का रिकार्ड है !!

इसलिए, अमेरिकी अर्थव्यवस्था तबाही के कगार पर है जिसे गिराने के लिए एक हल्का-सा धक्का काफी है। और इस संकटग्रस्त हालत और दूसरी साम्राज्यवादी ताकतों के साथ टक्कर के चलते उसने अपनी सैन्य शक्ति बढ़ाई और एकतरफा कार्यवाहियां शुरू कीं, जैसा कि इराक में किया।

राष्ट्रपति के रूप में दोबारा शपथ ग्रहण करते ही बुश ने सीरिया और इरान के खिलाफ, खासकर इरान के खिलाफ हमले की धमकियां जारी कीं। "इरान परमाणु बमों को विकसित कर रहा है", यह है इस बार अमेरिका का बहाना। मध्य पूर्व में उसके छोटे सरदार इज्राएल के अलावा किसी दूसरे देश के पास परमाणु हथियार रहना अमेरिका अपने हितों के खिलाफ मान रहा है। और तो और इरान दुनिया का पांचवां बड़े तेल उत्पादक देश जो है। अब बहाने गढ़ने का सिलसिला तेज हुआ है। उधर सीरिया पर इज्राएल समय-समय पर किसी न किसी बहाने मिसाइलों से हमले कर ही रहा है। अमेरिका तेल संसाधनों से समृद्ध मध्य पूर्व पर अपनी पकड़ मजबूत कर अपनी बदहाल अर्थव्यवस्था में जान फूंकना चाहता है। अगर उसकी इस योजना में कोई खलल डाल रहा है तो वह इराकी जनता का प्रतिरोध है। इरान पर एकतरफा कार्यवाही करने से भी वह अगर फिलहाल थोड़ा-बहुत भी कतरा रहा है तो सिर्फ इराकी प्रतिरोध की वजह से। उसे डर है इस कदम से समूचे मध्य पूर्व में शियाओं का एक जबर्दस्त प्रतिरोध उठ खड़ा हो सकता है क्योंकि इरान मूलतः शिया बहुल देश है। वैसे सुन्नियों ने तो पहले ही उसके नाक में दम कर रखा है। लेकिन उसकी मजबूरी भी है क्योंकि उसे तेल संसाधनों पर कब्जा और लगातार युद्धों के जरिए अपनी अर्थव्यवस्था को तबाही से बचाने की कोशिश भी करनी है। आइए, अब इराकी प्रतिरोध की प्रगति का जायजा लिया जाए जो अमेरिका के सारे नापाक मंसूबों पर पानी फेरता हुआ आगे बढ़ रहा है।

बहादुराना प्रतिरोध और अमेरिका के लिए दुःस्वप्न

देश के अन्दर फासीवाद और बाहर आक्रमण – यही अमेरिकी अर्थव्यवस्था के दो पहलू हैं जो गहरे संकट में फंसी हुई है। खुद अमेरिका में, खासतौर पर 9/11 हमलों के बाद फासीवादी दमन के कई कदम उठाए गए। हाल ही में खुफिया सेवाओं में व्यापक फेरबदल करना इस दिशा में एक उदाहरण है। ऐसा दूसरे विश्व युद्ध के बाद पहली बार किया गया। इसके अलावा बुश सरकार में ईसाई साम्प्रदायिकता बढ़ रही है। देश के भीतर और बाहर उसे जनता के कड़े प्रतिरोध का सामना कर पड़ रहा है। अमेरिका में युद्ध, भूमण्डलीकरण, बेरोजगारी, आदि के खिलाफ बड़े आन्दोलन हो रहे हैं। देश के बाहर, इराक में बहादुराना जन प्रतिरोध अमेरिकी शासकों के लिए दुःस्वप्न साबित हो रहा है।

फलूजा में हुई बहादुराना लड़ाई अमेरिकी आतंक के खिलाफ जन प्रतिरोध का एक और उदाहरण है। 5 लाख आबादी वाला एक छोटा-सा शहर फलूजा इराकी प्रतिरोध का निशान बन गया है। 4 नवम्बर को बुश ने दोबारा राष्ट्रपति चुनाव जीता और उसके तुरन्त बाद, 8 नवम्बर को पलूजा पर एक व्यापक हमला छेड़ दिया गया। साथ ही साथ, इराक में "सुन्नी त्रिकोण" कहलाने वाले उत्तरी इलाके के सभी शहरों में हमले छेड़ दिए गए। कठपुतली इयाद अल्लावी सरकार ने देश के अधिकांश हिस्सों में सैनिक कानून लागू किया। विरोध प्रदर्शनों और रैलियों पर पाबन्दी लगाई। हमले से पहले फलूजा में 24 घण्टों का करफ्यू लगा दिया गया। इस हमले के मद्देनजर सभी मंजे हुए प्रतिरोधी योद्धाओं के साथ-साथ फलूजा के करीब 2 लाख बाशिंदों ने बमबारी शुरू होने से पहले ही शहर छोड़ दिया। जो भी बचे थे वे अनुभवहीन छापामार थे जिनका लक्ष्य था सिर्फ संकेतात्मक लड़ाई लड़ना। इस शहर को करीब 20,000 अमेरिकी सैनिकों और कुछ कठपुतली सैनिकों ने घेरा था। अमेरिकियों ने सभी किस्म के बम गिरा दिए जिनमें 2,000 पाउण्ड और 5,000 पाउण्ड के बम भी शामिल थे। अमेरिका ने नापॉम बमों का भी प्रयोग किया जिस पर अन्तर्राष्ट्रीय बिरादरी ने 1980 में ही प्रतिबन्ध लगाया। एक अनुमान है कि इस घातक हमले में 6,000 लोग मारे गए। इराकियों के प्रतिरोध में 100 से ज्यादा अमेरिकी सैनिक भी मारे गए। अमेरिकियों ने शहर के अस्पताल को सबसे पहले बमों से तबाह किया। इससे अमेरिकी मंसूबों का पता चल जाता है। इस हमले के दौरान इराकियों पर अमेरिकियों द्वारा किए अत्याचारों ने दुनिया को हिलाकर रख दिया। इन बर्बरतम अत्याचारों की तुलना सिर्फ हिटलर के अत्याचारों से की जा सकती है। नागरिकों, महिलाओं और बच्चों को भी शहर छोड़ने का मौका नहीं दिया गया। यूफ्रेट्स नदी में कूद कर तैरते हुए भागने की कोशिश करने वालों को गोलियों से भून दिया गया। हवाई बमबारी और गोलाबारी से मसजिदों का शहर फलूजा मलबों का शहर बन गया। कुछ ही इमारतें बच गईं। अब मुश्किल से एक लाख लोग इस शहर में रह रहे हैं।

फौजी विश्लेषकों का मानना है कि फलूजा पर जिस पैमाने पर हमला किया गया वह वर्तमान इतिहास में अभूतपूर्व था। अमेरिका ने माना कि आधुनिक युद्ध के इतिहास में इस शहर में सबसे तीखी शहरी छापामार लड़ाई देखी गई। दरअसल यहां सिर्फ 400 छापामार ही रह गए थे जो "मरते दम तक लड़ाई" जारी रखी। बाकी छापामार मोसुल, रमादी, बखूबा और अन्य पड़ोसी शहरों में लड़ाई में शामिल हो गए। ज्यों ही फलूजा में हमला तेज हुआ इराकियों ने देश के दूसरे हिस्सों में हमले तेज कर दिए।

अमेरिका के हत्यारे तरीकों के खिलाफ दुनिया भर में जनता का गुस्सा बढ़ता जा रहा है। **इस युद्ध में अब तक लगभग एक लाख इराकी लोगों की जानें गईं जिनमें अत्यधिक बच्चे और महिलाएं हैं। इस अन्यायपूर्ण युद्ध के खिलाफ इराकियों के प्रतिरोधी संघर्ष में अब तक करीब 2,000 अमेरिकी सैनिक मारे गए और 10 हजार से ज्यादा घायल हो गए। अकेले 2004 में ही 1,300 से ज्यादा पुलिस वाले इराकी विद्रोहियों के हाथों मारे गए।** फलूजा पर

अमेरिकी हमले के फलस्वरूप इराकी इस्लामिक पार्टी कठपुतली इराकी सरकार से हट गई। यहां तक कि गुलाम कोफी अन्नान, जो संयुक्त राष्ट्र संघ का महासचिव है, ने भी अमेरिका और ब्रिटेन को कोई बड़ा फौजी हमला न करने की चेतावनी दी। लेकिन भारत सरकार ने बुश की तरफदारी करते हुए इराकी पुलिस को प्रशिक्षित करने के लिए उत्सुकता दिखाई ताकि इराक में चुनाव की ढोंगबाजी को अंजाम दिया जा सके।

फलूजा में जब अमेरिकियों ने विनाशकारी हमला छेड़ दिया तो विद्रोहियों ने मोसुल को अपना केन्द्र बना लिया। वहां के सारे पुलिस थानों पर विद्रोहियों ने कब्जा जमा लिया और इराकी पुलिस वालों को या तो बड़ी संख्या में मार डाला या फिर आत्मसमर्पण के लिए मजबूर किया। यह भी अब किसी से छिपी नहीं है कि कई इराकी पुलिस वालों ने विद्रोहियों का पक्ष लिया है। अमेरिकियों के लिए एक और बड़ी परेशानी यह है कि उन्हें कई बार यह भी मालूम नहीं हो रहा कि विद्रोही कौन हैं और इराकी पुलिस कौन हैं। मोसुल, रामादि, फलूजा और बग्दाद के आम लोगों से इराकी विद्रोहियों को जबर्दस्त समर्थन मिल रहा है जिसके बिना वे इतने हमलों को अंजाम नहीं दे पाते। खासकर ज्यों-ज्यों चुनाव का दिन नजदीक आ रहा था, विद्रोहियों ने अपने हमलों में जबर्दस्त तेजी लाई। यहां तक पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति जिम्मी कार्टर ने यह स्वीकार किया कि जनवरी 30 तारीख को इराक में चुनाव कराना सम्भव नहीं हो सकेगा।

21 दिसम्बर 2004 को मोसुल में इराकी विद्रोहियों ने एक बड़ा हमला किया जो अब तक का सबसे बड़ा हमला था। अमेरिकी मरीन सैनिकों के कैम्प के अन्दर किए गए इस आत्मघाती में कम से कम 19 अमेरीकी सैनिक मारे गए और 60 से अधिक गंभीर रूप से घायल हो गए।

हालांकि फलूजा का 'पतन' हुए तीन महीने गुजर चुके हैं। पर इराक में प्रतिरोध की लपटें थमने का नाम नहीं ले रही हैं। हालांकि इरान के दबाव में शिया नेता मुख्तदा अल सद्र लड़ाई से पीछे हट गया पर यह कहना मुश्किल है कि उसकी मेहदी सेना के लड़ाकू आक्रमणकारियों के खिलाफ लड़ाई में भाग न लेने के अल सद्र के आदेश का पालन कर रहे हैं। खासकर अब "सुन्नी त्रिकोण" कहलाने वाले उत्तरी इराक में प्रतिरोधी लड़ाई तेज है। **अब इराक में औसतन रोजाना 100 हमले किए जा रहे हैं। एक अनुमान है कि इराकी योद्धाओं की संख्या एक साल के अन्दर चार गुना बढ़ गई। और लगातार लोग लड़ाई में शामिल हो रहे हैं। एक वरिष्ठ इराकी सुरक्षा अधिकारी के मुताबिक इराकी विद्रोहियों की संख्या अब अमेरिकी सैनिकों की संख्या से भी ज्यादा, 2 लाख है तथा इराकी प्रतिरोध अब किसी एक इलाके के लिए सीमित नहीं है, बल्कि वह पूरे इराक को अपने चपेट में ले चुका है।**

चुनाव का नाटक खत्म पर लड़ाई जारी

इराकी लोगों के पुरजोर विरोध और प्रतिरोधी योद्धाओं के तेज हमलों के बीचोंबीच इराक में चुनाव का नाटक समाप्त हुआ। मजे की बात यह है कि इस चुनाव में खड़े होने वाले 7,471 उम्मीदवारों में बहुत कम लोगों ने खुद को लोगों से परिचित करने का साहस किया। अत्यधिक लोगों ने अपना नाम तक लोगों से छुपाया। मतदान पत्र में सिर्फ पार्टी का नाम छापा गया, न कि उम्मीदवार का नाम। इराकी कठपुतली सरकार ने फैसला किया कि इस चुनाव में वे लोग भी मतदान के हकदार होंगे जो 40 साल पहले देश छोड़ चुके हैं। अमेरिका या इज्राएल की नागरिकता प्राप्त लोग भी मतदान कर सकते हैं - वहीं पर जहां वे अब हैं। यानी जिन लोगों ने बुश और शेरान को वोट डाला वे भी इराकी राष्ट्रपति को चुन सकते हैं। एक अनुमान है कि ऐसे मतदाता 10 लाख से ज्यादा होंगे, जबकि इराक के इस ढोंगी चुनाव में कुल मतदाता डेढ़ करोड़ बताए जा रहे हैं। एक और अजीब-सी बात यह है कि मतदान केन्द्र कहां होगा, इसकी जानकारी लोगों को आखिरी पल तक नहीं दी गई। ठीक मतदान के दिन टीवी के जरिए बताया गया कि किस क्षेत्र के लोगों को कहां मतदान करना है। बमों और बन्दूकों के धमाकों के बीच इस चुनाव की सत्यता व निष्पक्षता को जांचने-परखने की किसी ने भी हिम्मत नहीं की। विदेशी पत्रकार सिर्फ कड़ी सुरक्षा वाले होटलों तक सीमित रह गए और उन्हें सिर्फ वही लिखना होता था जो अमेरिकी सैन्य अधिकारी बताते हैं।

चुनाव खत्म हुआ पर प्रतिरोधी कार्यवाहियां थमने का नाम नहीं ले रही हैं। 4 जनवरी को इराकी विद्रोहियों ने बग्दाद प्राविन्स के गवर्नर अली अल हैदरी को गोली मार दी। मई 2004 में इराकी प्रशासनिक परिषद के भूतपूर्व अध्यक्ष ज़हरा ओथमन की हत्या के बाद यही सबसे बड़ी घटना थी जिसमें इराक के किसी वरिष्ठतम नेता की हत्या की गई हो। अब इराक के इस ढोंगी चुनाव के नतीजे भी आ गए। शियाओं को बहुमत मिल गया जैसी कि उम्मीद थी। सुन्नी लोगों ने लगभग चुनाव का पूरा बहिष्कार किया। अब अमेरिका इराकी सुरक्षा बलों को प्रशिक्षित करके अपनी जमीनी फौजों को वापिस लेने की सोच रहा है। लेकिन यह कोई आसान काम नहीं है। अफगानिस्तान का अनुभव भी यही बताता है। भले ही अमेरिका का कठपुतली हामिद करजई को वहां सम्पन्न ढोंगी चुनावों में बहुमत मिल गया हो, पर सचाई यह है कि अमेरिकी नियंत्रण में चलने वाली करजई सरकार सिर्फ काबुल समेत कुछ शहरों तक सीमित है। देहाती इलाकों का एक विशाल हिस्सा तालिबानियों के कब्जे में है। **इराक में तो हालत और भी गंभीर है। यहां ऐसा कोई शहर ही नहीं बचा है जिसे अमेरिकियों के लिए सुरक्षित कहा जा सके। सारे शहर-कस्बे अमेरिकी कब्जे के खिलाफ खड़े हुए हैं। निश्चित रूप से आने वाले दिन अमेरिकी साम्राज्यवाद के लिए और ज्यादा मुश्किलों के होंगे - दुनिया भर की शोषित जनता और राष्ट्रीयताओं के लिए प्रेरणादायक होंगे।** ★

एमआर-2004 में अमेरिकी साम्राज्यवाद के खिलाफ तना तीर-धनुष

इराक पर अमेरिकी हमला - मानवता पर बर्बर हमला

[इराक पर अमेरिका के कब्जे के 2 साल पूरे होने जा रहे हैं। इस मौके पर 'प्रभात' के इस 'साम्राज्यवाद विरोधी विशेषांक' में हम इस विषय पर 'प्रभात' के पिछले अंकों में छपे लेखों को दोबारा प्रकाशित कर रहे हैं। आशा है, पाठकगण को अमेरिकी साम्राज्यवाद के युद्धोन्मादी मंसूबों और इराकियों के बहादुराना प्रतिरोध के विकासक्रम को समझने में हमारा यह प्रयास मददगार होगा। – *सम्पादक*]

21वीं सदी के हिटलर जॉर्ज बुश और 21वीं सदी के मुस्सोलिनी टोनी ब्लेयर की अगुवाई में 20 मार्च 2003 को इराक पर मानव इतिहास में अब तक का भयानक युद्ध छेड़ दिया गया। एक बेलगाम महाशक्ति अपने निहित स्वार्थों को पूरा करने के लिए किस अमानवीय सीमा तक जा सकती है इसका जीता-जागता उदाहरण है यह युद्ध। 'इराक के पास सामूहिक विनाशक हथियार मौजूद हैं', 'सद्दाम हुस्सेन एक निरंकुश तानाशाह है जिससे विश्व को, खासकर अमेरिका को खतरा है', 'सद्दाम हुस्सेन के साथ अल क़ायदा का रिश्ता है', 'सद्दाम हुस्सेन लगातार संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रस्तावों का उल्लंघन कर रहा है', आदि आरोप लगाते हुए अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने एक कमजोर व लगातार चल रहे युद्धों से जर्जर हो चुके एक गरीब देश पर भीषण बमबारी करके हजारों मासूम लोगों को हताहत कर दिया और भयानक तबाही मचाई। इराक पर हमला करके अमेरिका और उसके अनैतिक मित्र ब्रिटेन ने विश्व इतिहास में सबसे अधिक अन्यायपूर्ण और अलोकप्रिय युद्ध किया। दुनिया भर में कोने-कोने से इस युद्ध के खिलाफ लाखों जनता द्वारा विरोध के स्वर बुलन्द किए जाने के बावजूद और दुनिया के कई देशों के विरोध के बावजूद, बुश और ब्लेइर ने इस दरिन्दगी को अंजाम दिया। और इसे नाम दिया गया 'आपरेशन इराकी फ्रीडम', यानी इराक को 'आजादी' दिलवाने का अमेरिकी अभियान!

इस बच्चे का क्या कसूर था? अमेरिकी मिसाइल ने इस्माइल अब्बास (12) के हाथ ही नहीं काटे, बल्कि उसके माता-पिता और भाई की जान भी ली !

'आपरेशन इराकी फ्रीडम' की पृष्ठभूमि

पूरी दुनिया को अब यह साफ तौर पर मालूम हो गया कि इराक पर हमला करने का फैसला अमेरिका काफी पहले ही ले चुका था और वह वहां अपने इशारों पर चलने वाली एक कठपुतली सरकार का गठन करेगा। लेकिन इस नंगे दुराक्रमण के बचाव में उसने अपने टुकड़ों पर पलने वाले कठपुतली मीडिया के माध्यम से पहले से ही यह प्रचारित किया कि इराक के पास सामूहिक विनाश के हथियारों का जखीरा है जिससे दुनिया को बहुत बड़ा खतरा है। लेकिन इस तर्क को कई लोगों ने रद्द कर दिया। इससे उन्होंने राष्ट्र संघ के जरिए पिछले साल अक्टूबर में इराक में हथियारों की जांच शुरू करवा दी। सुरक्षा परिषद के अन्य सदस्य, खासकर फ्रान्स, चीन और रूस एकतरफा सैन्य कार्यवाही के पक्ष में नहीं थे। जर्मनी और अरब लीग के देशों ने भी अमेरिकी कार्यवाही का विरोध किया। हथियारों की जांच करने वाली टीम की रिपोर्ट भी अमेरिका के पक्ष में नहीं थी। उसने स्पष्ट कर दिया कि हथियारों की जांच के काम में इराकी सरकार ने पूरा सहयोग दिया। इससे ये साम्राज्यवादी डाकू बेचैन हो उठे क्योंकि युद्ध की उनकी तैयारियों में खलल-सी पड़ने लगी थी। उन्हें डर भी था कि युद्ध छेड़ने में देर हो जाए तो आने वाले महीनों में पड़ने वाली रेगिस्तानी गर्मी को उनके सैनिक झेल नहीं पाएंगे। इससे उन्होंने बिना देर किए सुरक्षा परिषद में धमकी, धौंस और बांह-मरोड़ के हथकण्डे भी अपनाकर बहुमत हासिल करने की घिनौनी कोशिश की। लेकिन फ्रान्स और रूस ने इराक पर युद्ध के लिए इजाजत देने के प्रस्ताव का वीटो करने का ऐलान कर दिया।

कुल 15 सदस्य देशों वाले सुरक्षा परिषद में प्रस्ताव पारित होने के लिए कम से कम 9 देशों का समर्थन जरूरी था। लेकिन उसे सिर्फ बुलगारिया का ही समर्थन हासिल हुआ था। अंगोला, कामेरून, चिली, मेक्सिको और पाकिस्तान किसी फैसले पर नहीं पहुंच सके। जर्मनी, चीन और सीरिया ने फ्रान्स और रूस का समर्थन किया। इससे आखिरकार 17 मार्च को अमेरिका और उसके सहयोगी ब्रिटेन व स्पेइन ने अपना प्रस्ताव वापस लिया। बाद में इन डकैतों ने अजोर्स नामक एक सुदूर द्वीप में गुप्त बैठक करके, ताकि विश्व जनता के विरोध से बचा जा सके, सद्दाम हुस्सेन को 48 घण्टे का अल्टिमेटम दिया कि वह या तो अपने परिवार के साथ देश छोड़कर चले जाए या फिर युद्ध झेले। जापान ने इस अल्टिमेटम का समर्थन किया। ऑस्ट्रेलिया के प्रधानमंत्री जॉन होवार्ड ने इस युद्ध में भाग लेने का ऐलान किया। लेकिन ये

साम्राज्यवादी डकैत अपनी बात पर भी टिके नहीं रहे। उन्होंने 48 घण्टे की समय-सीमा के पहले ही, सद्दाम हुस्सेन के देश छोड़कर जाने की स्थिति में भी हमला करने का ऐलान किया। और इस तरह शुरू हो गया 'आपरेशन इराकी फ्रीडम' यानी इराक को 'आजादी' दिलवाने का अभियान।

इराक को 'आजादी' दिलवाने के लिए 20 मार्च से 3 अप्रैल तक, यानी 14 दिनों में ही कोई 20 करोड पाउण्ड (1 पाउण्ड = लगभग 453 ग्राम) बम गिराए गए जोकि इतिहास में अभूतपूर्व था। साम्राज्यवादी गठबन्धन सेना ने हजारों टन बम गिराकर हजारों जनता को मारने के अलावा रिहायशी इलाकों, ऐतिहासिक स्थलों, अनाज के गोदामों, बिजली के यंत्रों, अस्पतालों, सरकारी दफ्तरों, पानी के यंत्रों, आदि को तबाह कर दिया। राष्ट्र संघ ने इस भयानक तबाही का मौन साधकर समर्थन दिया।

सामूहिक विनाशक हथियार इराक के पास? या अमेरिका के पास?

अमेरिका-ब्रिटेन के गठबन्धन ने युद्ध के मुख्य कारण के रूप में इस तथाकथित तथ्य को पेश किया कि इराक के पास नरसंहार के जैविक तथा रासायनिक हथियार थे, अतः उन्हें नष्ट करने के लिए इराक पर हमला करना जरूरी हो गया। अब जबकि अमेरिका के मुताबिक 'इराकी आजादी अभियान' समाप्त हो चुका है, लेकिन इराक में एक भी समूहिक विनाश का हथियार उन्हें हाथ नहीं लगा। काश! इराक में इन हथियारों को खोज निकालने के पहले अमेरिका वहां उनका रोपण किया होता!

सच तो यह है कि नरसंहार के आणविक, जैविक व रासायनिक हथियारों का सबसे बड़ा जखीरा खुद अमेरिका के पास है, जिससे वह सम्पूर्ण मानवजाति को सात बार खत्म कर सकता है। इस तरह उसका कोई नैतिक अधिकार ही नहीं बनता कि दूसरों पर सामूहिक विनाश के हथियार रखने का आरोप लगाए। इस तर्क को छोड़ भी दिया जाए तो अमेरिका के आरोप में रत्ती भर भी सचाई नहीं है, आज इराक की चप्पा-चप्पा जमीन पर हमलावर सेनाओं का अधिकार है, न तो तीन सप्ताह के युद्ध में सद्दाम शासन ने अपनी रक्षा हेतु रासायनिक एवं जैविक हथियारों का इस्तेमाल किया और न ही अपनी पूरी कोशिश के बावजूद गठबन्धन की फौजें तथा उनकी गुप्तचर एजेन्सियां ऐसे हथियारों को खोज निकालने में कामयाब हो सकीं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि इराक के पास ये हथियार थे ही नहीं, हथियारों का होना अमेरिकी प्रचार तंत्र (मीडिया) का करिश्मा था। इसकी पुष्टि इराक में हथियार निरीक्षक दल के प्रमुख ब्लिक्स की इस आत्मस्वीकृति से भी होती है कि अमेरिकी सरकार ने उन्हें भ्रमित एवं गुमराह करने वाली सूचनाएं उपलब्ध कराईं।

विडम्बना यह है कि जिस देश के पास नरसंहार के हथियार होने के बहाने अमेरिका ने यह हमला किया, उसी देश पर उसने भयकंर बमबारी से और तरह-तरह के हथियारों का इस्तेमाल करके हजारों लोगों को मौत की नींद सुला दी। इनमें ऐसे हथियार भी थे जिन्हें सामूहिक विनाश की श्रेणी में बताए जा सकते हैं। युद्ध के पहले ही दिन अमेरिका ने 1,000 क्रूइज मिसाइलें (जिनकी मारक क्षमता हिरोशिमा पर गिराए गए एटम् बम से अधिक थी) दागीं। इस युद्ध में अमेरिका ने क्लस्टर बम, डैजीकट्टर, क्रूड बम, बंकर बस्टर, डिप्लेटेड यूरेनियम आदि को खुलकर आजमाया। क्लस्टर बम तो एक ऐसा बम है जिसके विस्फोट से बिखरने वाले अनगिनत टुकड़े आने वाले कई सालों तक विस्फोटित होते रहेंगे और लोगों को हताहत करते रहेंगे। और डैजीकट्टर व क्रूड बमों को परमाणु बम के बाद सबसे घातक बम माने जाते हैं। डिप्लेटेड यूरेनियम एक ऐसा रेडियोधर्मी पदार्थ है जिसका प्रभाव परमाणु बम के प्रभाव से कम नहीं होगा। इसके पहले 1999 में उसने युगोस्लोविया में भी इसका प्रयोग किया था जिससे खुद गठबन्धन सेना के कई सैनिक घातक बीमारियों का शिकार बने थे। लेकिन अमेरिका हमेशा इसके प्रयोग के बारे में सचाई पर परदा डालने की कोशिश करता रहा है।

इसके पहले भी अमेरिका ने सामूहिक विनाश के हथियारों का खुलकर प्रयोग किया था। 1962-71 के बीच उसने वियत्नाम पर कई अमानवीय हमले किए थे ताकि उसे कम्युनिस्टों के हाथों में जाने से रोका जा सके। उन हमलों में उसने नापाम बमों के अलावा 1 करोड़

बमबारी से बचने बमों से बने गढ्ढों में ही खुद को छिपाने की विवशता

20 लाख टन एजेन्ट ऑरेन्ज (इसमें डयाक्सिन होता है) गिरा दिया। एजेन्ट ऑरेन्ज के दुष्प्रभाव से न सिर्फ वियत्मामी लोगों के नाड़ीमण्डल को क्षति पहुंची बल्कि दमे की दीर्घकालिक शिकायत, दिल की बीमारियां, थैराइड सम्बन्धी बीमारियां, कोख में ही शिशुओं की विकलता, आंखों में मोतियाबिन्द, आदि कई बीमारियों से लोगों का जीना ही मुश्किल हो चुका था। इसके अलावा उसने सरिन नामक जहरीला गैस का भी प्रयोग किया था।

साम्राज्यवादी सेनाओं द्वारा मार्च 20, 2003 को इराक के विभिन्न शहरों पर की गई बमबारी

अमेरिकी साम्राज्यवादी इतने कायर हैं कि उन्होंने इराक पर तभी यह युद्ध छेड़ दिया, जब वे पूरी तरह आश्वस्त हो गए थे कि उसके पास ऐसा कोई बड़ा हथियार नहीं है जिससे वह उनका मुकाबला कर सके। इराक के पास मौजूद 40 अल समौद मिसाइलों को राष्ट्र संघ के जरिए नष्ट करवाने के बाद उन्हें यकीन हो गया कि अब इराक शस्त्रास्तों की दृष्टि से पूरी तरह पंगु बन गया। हालांकि इस तथ्य से भी आंख बन्द नहीं की जा सकती है कि सद्दाम के पास रासायनिक व जैविक हथियार ईरान-इराक युद्ध के समय थे और यह हथियार किसी और ने नहीं, बल्कि अमेरिका ने ही दिए थे!! उस समय सद्दाम उसका दोस्त था। दोस्त सद्दाम हथियार रख भी सकता है और उनका इस्तेमाल भी कर सकता है, जबकि दुश्मन सद्दाम हथियार न रखने पर भी हथियार रखने के आरोप में हमले का शिकार बन जाता है, यह एक विचित्र प्रकार की अमेरिकी नैतिकता है जिसकी कोई सानी नहीं।

इराकी गणराज्य (अल जम्हूरिया अल इराकिया)

राजधानी :	बगदाद
क्षेत्रफल :	1 लाख 68 हजार वर्ग मील
सीमाएं :	पश्चिम में जोर्डान व सिरिया; उत्तर में तुर्की; पूर्व में ईरान; और दक्षिण में कुवैत और साउदी अरब
जनसंख्या :	2 करोड़ 12 लाख (1995 का अनुमान)
राष्ट्रीयताएं :	अरब 75-80% और कुर्द 15-20% और कुछ तुर्कमन
धर्म :	मुस्लिम 97% (शिया 60-65% और सुन्नी 32-37%)
भाषाएं :	अरबी (अधीकृत) और कुर्द
शिक्षा :	साक्षरता (1993) - 58%; 6-12 के आयु वर्ग को मुफ्त व आवश्यक शिक्षा
उद्योग :	कपड़े, पेट्रो केमिकल्स, तेल शुद्धीकरण, सिमेन्ट
फसलें :	गेंहू, चावल, खजूर और कपास
खनिज :	तेल और गैस

क्या सद्दाम एक निरंकुश तानाशाह था?

अमेरिका का एक और आरोप यह है सद्दाम एक निरंकुश तानाशाह है जिससे विश्व समुदाय को बड़ा खतरा है। अगर सद्दाम वाकई एक तानाशाह होगा तो उसे गद्दी से उतारने का जिम्मा इराकी जनता का है, न कि अमेरिका का। दुनिया भर में कई तानाशाहों की मदद करके उनके जरिए लाखों लोगों का कत्लेआम करवाने के लिए बदनाम अमेरिका का यह कहना कि 'सद्दाम बड़ा तानाशाह है' जैसे भूत के मुंह से वेदपाठ है। अब जरा इस पर गौर किया जाए कि सद्दाम को तानाशाह बनाया किसने था।

चालीस साल पहले, जब जॉन एफ केन्नेडी अमेरिका का राष्ट्रपति था, सीआईए ने बाग्दाद में तख्तापलट की हिमायत की थी। 1963 में तत्कालीन सरकार को अपदस्थ कर बाथ पार्टी ने सफलतापूर्वक सत्ता हथिया ली थी। सीआईए द्वारा दी गई सूचियों की मदद से बाथ सरकार ने उन सैकड़ों डाक्टरों, अध्यापकों, वकीलों, राजनीतिकों का सुनियोजित ढंग से कत्लेआम किया था जिन पर कम्युनिस्ट होने का संदेह था। बुद्धिजीवियों की एक पूरी पीढ़ी का ही सफाया कर दिया गया था। बताया जाता है उस कत्लेआम को युवा सद्दाम हुस्सेन की देखरेख में अंजाम दिया गया था, जो सीआईए का लाड़ला था। 1979 में बाथ पार्टी के भीतर पनपी गुटबाजी के चलते सद्दाम हुस्सेन इराक का राष्ट्रपति बन गया। 1980 में जब वह शिया मुसलमानों का कत्लेआम कर रहा था, तब अमेरिका ने कहा था कि इराक के हित ही अमेरिका के हित हैं। वाशिंगटन और लन्दन ने सद्दाम हुस्सेन का खुलेआम और सीधे तौर पर समर्थन किया था। उन्होंने सद्दाम को पैसा, औजार और हथियार उपलब्ध करवाए थे। उन्हें दोहरे उपयोग वाली सामग्रियां भी दीं ताकि उनसे सामूहिक विनाश के हथियार बनाए जा सकें। उनके क्रूर अत्याचारों में अमेरिकियों की आर्थिक, नैतिक व पादार्थिक मदद थी।

ईरान के खिलाफ लगभग आठ साल तक चले लम्बे युद्ध में भी उन्होंने सद्दाम का समर्थन किया था। 1988 में हलाबजा में कुर्द जनता को जहरीले गैस के प्रयोग करके मारने में अमेरिकियों को कोई गलती महसूस नहीं हुई। अब, चौदह बरस बाद, अमेरिका इन्हीं अपराधों को खोद निकालकर इराक पर अपने हमले के लिए कारण बताकर अपनी कार्यवाही को न्यायोचित ठहराने की कोशिश कर रहा है। यहां तक कि पहले खाड़ी युद्ध के बाद बस्रा में हुई शिया मुसलमानों की बगावत की भी 'मित्र' देशों ने अनदेखी की। जब सद्दाम हुस्सेन उस बगावत को कुचल रहा था और बदले की भावना से हजारों लोगों का कत्लेआम कर रहा था, तब इन्होंने चुप्पी साध ली थी। अगर इन सारे सामूहिक नरसंहारों के लिए सद्दाम हुस्सेन को सजा देनी है, तो सबसे पहले उसके इन अत्याचारों का समर्थन करने वालों को, यानी अमेरिका और उसके गुर्गों को सजा देनी चाहिए।

भागते इराकी जो भीषण बमबारी और गोलीबारी से खुद को बचाने कर रहे

को जायज ठहराने के लिए यह प्रचारित कर रहा है कि सद्दाम बड़ा तानाशाह है। सवाल यह नहीं कि वाकई सद्दाम एक खतरनाक तानाशाह था या नहीं, बल्कि सवाल यह है कि अमेरिका को किसी दूसरे व्यक्ति को तानाशाह ठहराकर उसके देश पर हमला करने का अधिकार किसने दिया। सद्दाम की तानाशाही से लड़ना और उससे मुक्ति पाना इराकी जनता का काम है, न तो अमेरिका का और न ही, यहां तक कि, राष्ट्र संघ का।

संयुक्त राष्ट्र संघ की सेवक भूमिका

इराक युद्ध के दौरान राष्ट्र संघ के महासचिव कोफी अन्नान ने एक मंजे हुए अमेरिकी दलाल की तरह काम किया। इराक में मौजूद राष्ट्र संघ के सैकड़ों हथियार निरीक्षकों और कुवैत की सीमा में मौजूद शांति सेनाओं को तुरन्त वापस बुलाया ताकि अमेरिका को इराक में घुसकर मनमाने ढंग से बमबारी करने में सुविधा मिल सके। इराक को निशस्त्र बनाकर अमेरिकी महाशक्ति के सामने उसे पूरी तरह से कमजोर बनाने की साजिश करके राष्ट्र संघ ने बेहद घिनौनी व निंदनीय भूमिका अदा की। उसने इराक को अपने अल समौद मिसाइलों को नष्ट करने पर बाध्य किया क्योंकि उनकी मारक दूरी 180 किलोमीटर है जोकि अंतर्राष्ट्रीय डकैतों द्वारा निर्धारित दूरी से 30 किलोमीटर ज्यादा है। 1991 के तथाकथित पहले खाड़ी युद्ध से लेकर, अमेरिका ने 1996 में और फिर 1998 में जब चाहे तब इराकी सैन्य सुविधाओं पर तथा सद्दाम के आवासों पर मनमानी बमबारी की। व्यापक तबाही मचाई। इराक की संप्रभुता पर हुए इन सभी हमलों को राष्ट्र संघ की स्वीकृति थी। अब इस ताजातरीन युद्ध में भी जब अमेरिका भयानक बमबारी करते हुए हजारों लोगों का कत्लेआम कर रहा था और व्यापक तबाही मचा रहा था, तब भी राष्ट्र संघ का चुप्पी साध लेना एक घोर अपराध था।

इससे भी बदतर यह था कि राष्ट्र संघ की सहमति से ही अमेरिका ने इराक पर कई अमानवीय प्रतिबन्ध लगाए। उसे अपना तेल बेचने के लिए भी राष्ट्र संघ की इजाजत लेना अनिवार्य बनाया। इराक की संप्रभुता की अवहेलना करने वाले राष्ट्र संघ के प्रतिबन्धों के तहत इराक को आवश्यक दवाओं का निर्यात बन्द कर दिया गया। इससे करीबन 15 लाख लोगों की मौत हुई जिनमें आधा मासूम बच्चे

तानाशाहों का तानाशाह और विश्व जनता का नम्बर एक दुश्मन है अमेरिका

इतिहास गवाह है, मानवजाति के खिलाफ दुनिया में अब तक हुए घोरतम अपराधों के लिए खुद अमेरिकी साम्राज्यावाद ही जिम्मेदार है। दुनिया के कुख्यात तानाशाहों का अमेरिका ने समर्थन ही नहीं किया, बल्कि जनता के कत्लेआम करने में उनकी हर प्रकार की सहायता भी की। इसके अनेक उदाहरण हैं। वह अमेरिका ही था जिसने 1973 में लातिन अमेरिकी देश चिली में साल्वेडार अलेन्डी की तख्तापलट करके तानाशाह फिनोचेट को गद्दी पर बिठाया था। फिनोचेट के शासन काल में चिली में 10 लाख से ज्यादा लोगों का कत्लेआम किया गया था, जो अमेरिका की शह पर ही हुआ था। अमेरिका ने इन्डोनेशिया में सुहार्तो की तानाशाही का भी सक्रिय समर्थन किया जिसने 10 लाख से ज्यादा कम्युनिस्टों का कत्लेआम किया था। फिलिप्पीन्स के तानाशाह मार्कोस को अमेरिका का समर्थन प्राप्त था, जिसने देश में तमाम जनवादी अधिकारों का हनन किया था; सैकड़ों-हजारों लोगों की हत्या की थी; और देश की काफी सम्पदा लूट ली थी। जैरे के तानाशाह मोबुतु को अमेरिका का सहयोग मिला हुआ था जिससे उसने देश को अन्धाधुन्ध लूटा और बेहद अत्याचार किए थे। एक डुवेलियर, एक बाटिस्टा, एक बोथा, एक नोरीगा, एक फुजीमोरी.... तानाशाहों की यह सूची काफी लम्बी है जिन्हें अमेरिका की सक्रिय मदद मिली थी। इज्राएल द्वारा आए दिन की जा रही फिलिस्तीनियों की हत्याओं को भी अमेरिका का पूरा समर्थन मिला हुआ है, यह बात किसी से छिपी नहीं है। दुनिया भर में तानाशाहों को पालने-पोसने वाला अमेरिका इराक पर अपने हमले

> ***"..........हमारा दृढ़ विश्वास है कि साम्राज्यवाद लूटने खसोटने के उद्देश्य से संगठित किए गए एक विस्तृत षडयन्त्र को छोड़कर और कुछ नहीं है। साम्राज्यवाद मनुष्य द्वारा मनुष्य को, तथा एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र को धाखा देकर शोषण करने की नीति के विकास की अन्तिम अवस्था है। .... साम्राज्यवादी अपने लूट-खसोट के मंसूबों को आगे बढ़ाने की गरज से केवल अपनी अदालतों द्वारा ही राजनीतिक हत्याएं नहीं करते, बल्कि युद्ध के रूप में भी कत्लेआम, विनाश तथा अन्य कितने ही वीभत्स एवं भयानक कार्यों का संगठन करते हैं। "***
>
> **— भगत सिंह**

थे। इन अमानवीय प्रतिबन्धों के दिल दहलाने वाले दुष्प्रभावों को अमेरिकी शोधकर्ता जॉन म्युल्लर और कारल म्युल्लर के इस निष्कर्ष से समझा जा सकता है कि ''सम्भवतः नरसंहार के तमाम हथियारों के बनिस्बत आर्थिक प्रतिबन्धों से ही ज्यादा लोग मारे गए।''

कुछ लोग नरमी विरोध जताते हुए यह तर्क दे रहे हैं कि इराक को निशस्त्र बनाने का काम राष्ट्र संघ का था, अमेरिका को इस तरह की आक्रामक कार्यवाही नहीं करनी चाहिए थी। लेकिन राष्ट्र संघ सबसे पहले अमेरिका को क्यों नहीं निशस्त्र बनाता? ब्रिटेन को क्यों नहीं? नरसंहार के सबसे घातक व सबसे ज्यादा हथियार तो उन्हीं के पास मौजूद हैं। ऐसे लोग एक गलतफहमी फैलाने में कामयाब हो गए कि अगर राष्ट्र संघ की सहमति हो तो किसी भी देश से युद्ध करना जायज है। ये लोग एक कड़वी सच्चाई से अपनी आंख बन्द कर रहे हैं कि राष्ट्र संघ साम्राज्यवादियों, खासकर अमेरिकी साम्राज्यवादियों की एक कठपुतली भर है। किसी देश की सम्प्रभुता पर हमला करने का अधिकार राष्ट्र संघ को भी नहीं है।

अन्य साम्राज्यवादियों का 'विरोध'

हमने ऊपर देखा है कि अमेरिका के इस एकतरफा युद्ध का कुछ अन्य साम्राज्यवादी देशों ने विरोध किया। इससे साम्राज्यवादियों के आपसी अन्तरविरोध की एक झलक तो मिल जाती है। लेकिन इन साम्राज्यवादियों के 'विरोध' के पीछे लोकतंत्र का पक्ष लेने या एक देश की सम्प्रभुता को मान्यता देने का कोई नेक इरादा तो नहीं था। इन्होंने राष्ट्र संघ प्रस्ताव का 'विरोध' करने के सिवाए कोई व्यावहारिक कदम नहीं उठाया।

असल में फ्रान्स, जर्मनी, रूस जैसे साम्राज्यवादी देश इराक की लूट में अपना हिस्सा चाहते हैं। इन देशों ने सुरक्षा परिषद में अमेरिकी युद्ध को वैधता दिलवाने वाले प्रस्ताव को पारित नहीं होने दिया। लेकिन ज्यों ही युद्ध शुरू हुआ, इन्होंने एक से बढ़कर एक अमेरिका की विजय की कामना की। फ्रान्स के राष्ट्रपति जांक शिराक ने अपने देश की वायु सीमा को इस्तेमाल करने की इजाजत अमेरिकी वायुसेना को दी। जर्मन विदेशमंत्री योशका फिशर ने खुलेआम घोषणा की कि उसकी आकांक्षा है कि सद्दाम हुस्सेन के शासन का जल्दी से पतन हो। रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन ने भी यही आकांक्षा प्रकट की। इस युद्ध के पहले इराक को निशस्त्र बनाने की साजिश में भी इन सरकारों का हाथ था। इस युद्ध में लूटी गई सम्पदा में एक हिस्सा पाने की आशा से ही इन्होंने युद्ध में अमेरिका का समर्थन किया है। युद्ध के पहले इराक के साथ किए गए व्यापार समझौतों को भी अमेरिका मान्यता का आश्वासन दे, यह भी उनकी तमन्ना थी। युद्ध के पहले राष्ट्र संघ में नैतिकता पर अनर्गल बयानबाजी करने वाले पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने, ज्यों ही संकट शुरू हुआ, अपने देशों की अत्यधिक जनता के विरोध को भी नजरअन्दाज करते हुए जिस तरह से अमेरिका का समर्थन किया, इससे साम्राज्यवाद जनता के सामने नंगा हो गया। यह स्थिति साम्राज्यवाद और विश्व जनता के बीच अन्तरविरोध को और तीखा कर देती है।

युद्ध के असली कारण

इन दुराक्रमणकारियों ने युद्ध के जो कारण बताए हैं, वे वास्तविक नहीं थे बल्कि वास्तविकता पर पर्दा डालने वाले थे। ***युद्ध के असली कारण थे :*** **इराक का तेल; डॉलर तथा यूरो में वर्चस्व की लड़ाई; पश्चिम एशिया को पूरी तरह से अमरिकी प्रभुत्व में लाना; और युद्ध रूपी आक्सिजन से अमेरिका की आर्थिक बदहाली से उबरना।**

इराक विश्व के दो प्रमुख तेल उत्पादक देशों में से एक है। इराक के तेल को अपने कब्जे में लाकर अमेरिका न सिर्फ अपने देश के भीतर तेल की आपूर्ति को लेकर निश्चिन्त हो जाता, बल्कि तेल उद्योग में अमेरिकी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की इजारेदारी तेल को कूटनीतिक हथियार के रूप में इस्तेमाल करने का भी मौका प्रदान करती। इस इजारेदारी के जरिए अमेरिका के बड़े पूंजीपति जो अत्यधिक मुनाफा कमाएंगे वह अलग। अमरिका के लिए परेशानी की वजह यह थी कि सद्दाम के रहते इराक के तेल पर उसका कब्जा नहीं हो सकता। आज से बीस साल पहले बेक्टेल कम्पनी के लिए इराक-जोर्डान पाइप लाइन का ठेका लेने गए रम्सफेल्ड को, जो आज अमेरिका का रक्षामंत्री है, बैरंग वापस लौटना पड़ा था। इतना ही नहीं, वर्तमान में इराक के तेल के बारे में सद्दाम ने कई समझौते रूस व फ्रान्स के साथ किए। कोई आश्चर्य नहीं कि अमेरिकी तेल लॉबी का मुख्य पैरोकार रम्सफेल्ड इराक पर युद्ध के लिए सबसे ज्यादा उतावला था।

पिछले कुछ समय से मुद्रा जगत् की मुख्य घटना डॉलर तथा यूरो के बीच का टकराव है। इस टकराव में यूरो, जो यूरोपियन यूनियन की मान्य मुद्रा है, का पलड़ा भारी था। डॉलर की कीमत में गिरावट आ रही थी तथा यूरो मजबूत हो रहा था। डॉलर का कमजोर पड़ना अमेरिका की अन्तर्राष्ट्रीय साख एवं अर्थव्यवस्था दोनों के लिए ही खतरनाक था। सद्दाम पर अमरिका के गुस्से का यह भी एक कारण था कि इस स्थिति को पैदा करने में उसकी भूमिका थी। उसने इराक के विदेशी जमा को डॉलर की जगह यूरो में करके तथा इराकी तेल की कीमत यूरो में लेने का फैसला करके अमेरिका को गहरी चोट पहुंचाई थी। इराक की तर्ज पर कुछ अन्य तेल निर्यातक देशों के यूरो को इस्तेमाल करने की सम्भावना से अमेरिकी लुटेरे घबराए हुए थे। नई अमेरिकी सदी का उनका सपना चकनाचूर होता नजर आ रहा था।

पश्चिम एरिया को हर कीमत पर अपने पूर्ण राजनीतिक एवं सैनिक नियन्त्रण में लेना है, यह अमेरिका की एकध्रुवीय नई विश्व व्यवस्था का आधार है। इसी सिद्धान्त के चलते इराक पर हमला हुआ तथा युद्ध पूरी तरह से खत्म होने के पहले ही सीरिया को धमकाने का काम शुरू हो गया। पश्चिम एशिया में अमेरिका का चेला इज्राएल पिछले छह दशकों से अरब जनता पर हमले करता आ रहा है। उसने अमेरिका की मदद से फिलिस्तीन, सीरिया, जोर्डान और लेबनान पर कई बार हमले किए और उनके भूभागों को हड़प लिया। फिलिस्तीनी लोग इज्राएल के क्रूर अत्याचारों के खिलाफ वीरतापूर्वक लड़ रहे हैं। सद्दाम फिलिस्तीनियों के संघर्ष का समर्थन करता है, यह भी अमरिकी हितों के लिए एक खतरा था क्योंकि अमेरिका इज्राएल के सहारे पूरे पश्चिम एशिया को अपनी मुठ्ठी में रखना चाहता है। और इसलिए भी सद्दाम अमेरिका का दुश्मन बन गया।

सबसे महत्वपूर्व बात यह है कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था घोर

अमेरिका के दुराक्रमणकारी युद्ध के खिलाफ उमड़ी जनता

संकट में फंस चुकी है। उसे खासकर यूरोपीय यूनियन और जापान से कड़ी टक्कर मिल रही है। दूसरे विश्व युद्ध के बाद से अमेरिका की स्थाई युद्ध अर्थव्यवस्था एक अनिवार्य परिणाम था। जिस दिन हथियारों के कारखाने बन्द हो जाएंगे उसी दिन अमेरिकी अर्थव्यवस्था पूरी तरह से चौपट हो जाएगी। उसका सैन्य खर्च समूची दुनिया के खर्च में लगभग आधा है। यदि यह खर्च कम किया जाए तो बेरोजगारी की दर अकल्पनीय स्तर तक बढ़ जाएगी जिससे तेज सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संकट पैदा हो जाएगा। इसलिए, सोवियत संघ के पतन के बाद अमेरिकी साम्राज्यवादियों को कुछ दुश्मन ढूंढ़ने पड़े ताकि उसकी युद्ध की मशीन चलती रह सके। इसलिए वह अपने सैन्य खर्चों को लगातार बढ़ा रहा है। संकट में गले तक फंसी हुई उसकी अर्थव्यवस्था के लिए 11 सितम्बर की घटनाएं वरदान साबित हुईं। इस्लामिक आतंकवाद को बड़े खतरे के रूप में चित्रित करना शुरू किया और सैन्य खर्च की व्यापक योजनाएं तैयार कीं। विश्व में होने वाले 800 अरब डॉलर के हथियार व्यापार का आधा हिस्सा अमेरिकी कम्पनियों का है। युद्ध और हथियार उद्योग अमेरिकी शासकवर्गों की जीवन-रेखा बन गए।

युद्ध के बाद 'पुनर्निर्माण', पर किसका?

युद्ध के परिणामस्वरूप होने वाले महाविनाश के बाद आर्थिक पुनर्निर्माण के नाम पर अमेरिकी कम्पनियां इराक का आर्थिक दोहन कर अत्यधिक मुनाफा कमाने और अमेरिका की बदहाल अर्थव्यवस्था में नई जान फूंकने के लिए जो योजनाएं लेकर आ रही हैं, वे युद्ध के निहित स्वार्थी चरित्र और असली कारण को उजागर कर देती हैं। अमेरिका की एक प्रसिद्ध कम्पनी हैलीबर्टन की सब्सिडियरी शाखा को तेल कूपों की मरम्मत का 50 करोड़ डॉलर का ठेका मिल चुका है, जो बढ़कर 750 करोड़ डॉलर तक पहुंच सकता है। इस कम्पनी के साथ अमेरिका के उपराष्ट्रपति डिक चेनी का नाम जुड़ा है। इस तथाकथित दूसरे खाड़ी युद्ध में अमेरिका की 'विजय' के बाद जिस जे गारनर को इराकी प्रशासन की बागड़ोर सौंपी गई वह एक भूतपूर्व सैन्य जनरल ही नहीं, बल्कि मिसाइल बनाने वाली एक कम्पनी – एल-3 कम्युनिकेशन्स – का अधिकारी भी था। बताया जाता है इराक पर दागी गई कुछ मिसाइलें इसी गारनर की कम्पनी की तकनीक से बनाई गई थीं। पुनर्निर्माण कार्य के 90 करोड़ डॉलर के ठेके के लिए, जो अरबों डॉलर का काम हो सकता है, वे पांच कम्पनियां दौड़ में हैं जिन्होंने बुश के चुनाव अभियान के लिए लाखों डॉलर दिए थे। इराक के कृषि क्षेत्र पर नियंत्रण जमाने के लिए क्राफ्ट तथा अन्य अमेरिकी कम्पनियों ने तैयारी शुरू कर दी है। शस्त्र उद्योग के क्षेत्र में इस युद्ध में किए गए प्रदर्शन के आधार पर लोकहेड, बोइंग तथा जनरल डाइनेमिक जैसी कम्पनियां टॉमहॉक तथा एजीएम 154 मिसाइल व अन्य हथियार बेचकर करोड़ों का मुनाफा कमाने की सोच रही हैं।

इससे साफ मालूम हो जाता है कि अमेरिका के इस युद्ध के फैसले के पीछे कौन सी ताकतें मौजूद थीं। और यह भी कि 'पुनर्निर्माण' के नाम पर इराक में जो कोशिश चल रही है, दरअसल वह अमेरिकी अर्थव्यवस्था को संकट से उबारने की कवायद ही है।

इराकी जनता का बहादुराना मुकाबला

एक लगभग निहत्थे देश ने महाशक्ति को तीन सप्ताह तक कैसे टक्कर दी? चौबीसों घण्टों की बेरोकटोक बमबारी के बाद बगदाद की तस्वीर क्या हो गई होगी? ये ऐसे सवाल हैं जो हमें आश्चर्य में डाल देते हैं। मानव इतिहास में इस बेहद असमान युद्ध में इराकी जनता ने बुलन्द हौसलों का जो प्रदर्शन किया, वह विश्व जनता के लिए एक मिसाल है। अमेरिकी युद्धोन्मादियों ने सोचा था कि वे इराक को चंद घण्टों में नहीं तो चंद दिनों में कब्जा कर लेंगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। एक सप्ताह के बाद वे किसी एक शहर पर भी कब्जा नहीं कर पाए। उन्हें लगभग एक लाख अतिरिक्त फौजों को बुलाना पड़ा। उन्होंने सैकड़ों निहत्थे नागरिकों को मार डाला ताकि उन्हें विरोध का सामना न करना पड़े। जो दिखाई दिया उस पर ग्रेनेड दागी या गोली चलाई। रिहायशी इलाकों पर कार्पेट बमबारी की।

इराकी जनता को पानी, बिजली, ईंधन, स्वास्थ्य सुविधा आदि से वंचित करके उन्हें अमेरिका के सामने घुटने टेकने पर मजबूर करना अमेरिकी-ब्रितानी दरिंदों की रणनीति रही। लेकिन इराकी जनता ने धैर्य का परिचय दिया, घुटने नहीं टेके। वे शुरू से ही लगातार विरोध प्रदर्शन करते रहे। अब जबकि युद्ध की औपचारिक समाप्ति हो गई, इराकी जनता ने छापामार युद्ध की रणनीति अपनाकर अमेरिकी आक्रमणकारियों के नाकों दम करके रख दिया। आए दिन कहीं न कहीं से अमेरिकी सैनिकों पर और उनके काफिलों पर हमलों की खबरें आ रही हैं। अनेक अमेरिकी सैनिक कुत्तों की तरह मर रहे हैं। नागरिक सुविधाओं को लेकर जनता हर दिन आक्रमणकारी सैनिक शासकों के खिलाफ विरोध प्रदर्शन कर रही है।

अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने यह सपना देखा था और इसे सच बनाने की साजिश भी रची थी कि इराक में जब वे हमला करेंगे तब शिया मुसलमान सद्दाम शासन के खिलाफ बगावत कर देंगे और उनका पल्ला थाम लेंगे। अमेरिकी जनता को भी उन्होंने ऐसा ही आश्वस्त किया हुआ था। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। हालांकि इराक में शिया मुसलमानों की आबादी 60-65 प्रतिशत है और सद्दाम ने उनका उत्पीड़न भी कर रखा था, लेकिन शिया लोगों ने अमेरिकी आक्रमणकारियों का समर्थन नहीं किया। उन्होंने सूझबूझ

का परिचय देते हुए विदेशी आक्रमणकारियों के खिलाफ दृढ़तापूर्वक विरोध का रास्ता अपनाया।

साम्राज्यवाद के टुकड़ों पर पलने वाले मीडिया की भूमिका

इस युद्ध में साम्राज्यवाद के पक्ष में मीडिया ने जिस तरह की भूमिका निभाई वह भी 'ऐतिहासिक' ही है। हालांकि फासीवादियों के लिए गोबेल्स की तरह का दुष्प्रचार कोई नई बात नहीं है, फिर भी इस युद्ध में जिस शर्मनाक हद तक इसका दुरुपयोग किया गया वह हैरान कर देने वाला है। अपनी निष्पक्षता का ढिंढ़ोरा पीटने वाले बीबीसी ने वास्तव में 'बुश-ब्लेइर कॉर्पोरेशन' की तरह काम किया। सीएनएन, एनबीसी, वॉइस ऑफ अमेरिका, आदि सभी माध्यमों ने असत्यों, गढ़े हुए सत्यों या अर्ध सत्यों का खुला प्रचार किया। उदाहरण देखिए, जबकि न्यूयार्क में राष्ट्र संघ के मुख्यालय के पास 7½ लाख लोगों का प्रदर्शन हो रहा था, तब वीओए ने युद्ध के समर्थन में 50 लोगों द्वारा किए गए प्रदर्शन को बढ़ा-चढ़ाकर प्रसारित किया था। सभी प्रचार माध्यमों ने झूठों का प्रचार ही नहीं किया, बल्कि झूठों को बार-बार दोहराकर जनमत को प्रभावित करने में भी सफलता प्राप्त की। खासकर 11 सितम्बर की घटनाओं के बाद अमेरिकी जनता में यह लगातार प्रचारित किया गया कि सद्दाम से अमेरिका को खतरा है क्योंकि अल क़ायदा के साथ उसके सम्बन्ध हैं। सितम्बर 2001 में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार सिर्फ 3 प्रतिशत अमेरिकी ही 9/11 के हमलों के लिए सद्दाम को दोषी मानते थे, लेकिन मीडिया के दुष्प्रचार की आंधी से एक साल बाद ऐसी स्थिति निर्मित हो गई कि 50 प्रतिशत से ज्यादा अमेरिकी सद्दाम को दोषी मानने लग गए। यह एक उदाहरण ही है।

मीडिया पर, जिसे लोकतंत्र के आधार-स्तम्भों में एक कहा जाता है, साम्राज्यवादियों का एकाधिकार कायम है। उदाहरण के लिए, अमेरिका में क्लीयर चैनल वर्ल्ड वाइड इंकार्पोरेटेड एक कम्पनी है जिसके सबसे ज्यादा रेडियो स्टेशन हैं और 1200 से ज्यादा चैनल हैं। बाजार में इस कम्पनी का हिस्सा 10 प्रतिशत है। इस कम्पनी के प्रमुख कार्यकारी अधिकारी ने बुश के चुनाव प्रचार अभियान के लिए लाखों डॉलर चंदा दिया था। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि जब इराक पर जबरन युद्ध थोपने के बुश के फैसले के खिलाफ लाखों अमेरिकी प्रदर्शन कर रहे थे, क्लीयर चैनल ने 'अमेरिका के समर्थन में कई देशभक्तिपूर्ण रैलियां' आयोजित करवाईं। यह एक मकड़जाल है जिसमें हथियार व्यापारियों, मीडिया साम्राटों और राजनेताओं का अजीब सा घालमेल है।

भारतीय शासक वर्गों का दिवालियापन

इराक पर अमेरिकी दुराक्रमण के खिलाफ भारत के शासक वर्गों ने जो रवैया अपनाया उससे उनका दलाल चरित्र फिर एक बार नंगा हो गया है। युद्ध के आखिर तक उन्होंने अपना कोई निश्चित रवैया स्पष्ट होने नहीं दिया। यहां तक कि युद्ध के दौरान अमेरिकी विमानों को ईंधन भर लेने की सुविधा मुहैया करवाने की सम्भावना को भी रद्द नहीं किया। लोकसभा में आमेरिकी आक्रमण पर निंदा प्रस्ताव के दौरान, भाजपा ने काफी नानुकर करके अपने अमेरिका-अनुकूल चरित्र को उजागर किया। वाजपेयी सरकार इराक में पुलिस का काम लेने के लिए भी बेताब है ताकि अपने अमेरिकी आकाओं का हाथ बंटा सके। इनकी आशा है कि अमेरिका इस युद्ध से प्राप्त लूट के ठेकों में एक छोटा हिस्सा भी तो भारत के दलाल पूंजीपतियों को दे। लेकिन इस तरह वे भारत की जनता के सामने बेनकाब हो गए। इराक में भारतीय सेना द्वारा पुलिसिया काम की सम्भावना को लेकर जनता में जबर्दस्त विरोध उठ खड़ा हो रहा है।

साम्राज्यवाद के खिलाफ जुझारू जन-संघर्ष ही एक मात्र रास्ता

अमेरिकी-ब्रितानी साम्राज्यवादियों के इराक पर दुराक्रमण के खिलाफ विश्व जनता की एकजुटता काबिले तारीफ है। कई जन संगठनों ने अमेरिकी-ब्रितानी वस्तुओं का बहिष्कार करने का आह्वान भी किया। कई देशों में अमेरिकी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों पर लोगों ने हमले करके अपना विरोध प्रकट किया। इराक से अमेरिकी फौजों को वापस जाने की मांग करते हुए विश्व जनता को अपनी आवाज और बुलन्द करनी चाहिए। आक्रमाणकारी सेनाओं के खिलाफ जूझ रहे इराकी लोगों का तहेदिल से समर्थन करना चाहिए।

इस भूगोल को साम्राज्यवादी युद्धों से मुक्त करना है तो वह जनता और सिर्फ जनता ही कर सकती है। साम्राज्यवाद को खत्म करके समाजवादी व्यवस्था की स्थापना करना ही एक मात्र विकल्प है जिससे युद्ध को हमेशा के लिए खत्म कर देने का रास्ता बन सकता है। आज अमेरिकी साम्राज्यवाद दुनिया में अलग-थलग पड़ चुका है, जो कि एक अनुकूल परिणाम है। इराक युद्ध से यह सचाई फिर एक बार साबित हो जाती है कि आज दुनिया में साम्राज्यवाद के खिलाफ उत्पीड़ित राष्ट्रों और उत्पीड़ित जनता का अन्तरविरोध ही ज्यादा प्रखर है। उत्पीड़ित जनता और उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं के विरोध के चलते एकध्रुवीय विश्व व्यवस्था का अमेरिका का सपना भी दिवास्वप्न ही साबित हो रहा है। इस युद्ध में यूरोपियन यूनियन के कुछ देशों, रूस और चीन से उसे विरोध का सामना करना पड़ा। उनके साथ उसका अन्तरविरोध और भी बढ़ने की सम्भावना है क्योंकि आखिर साम्राज्यवाद एक ऐसा भेड़िया है जिसकी भूख मिटाए नहीं मिटती। वे विश्व पर अमेरिका के एकाधिकार को चुप्पी साधकर मान लेने को तैयार नहीं हैं। भले ही आज साम्राज्यवादी ताकतों के बीच सांठगांठ ही मुख्य रुझान बनी हुई है, पर साम्राज्यवाद के रोज-रोज गहराते संकट से उनके बीच अन्तरविरोध और ज्यादा तीखे बन सकते हैं। साम्राज्यवाद का मतलब है युद्ध। युद्धों का मतलब जनता की सम्पूर्ण तबाही। निश्चय ही इससे सभी देशों में आर्थिक व राजनीतिक उथल-पुथल मचेगी।

हम अपनी सारी ताकतों को गोलबन्द करेंगे और मौजूदा अनुकूल स्थिति का फायदा उठाते हुए अमेरिकी साम्राज्यवाद को पूरी तरह से अलग-थलग कर देंगे। युद्ध और साम्राज्यवाद के खिलाफ एक जुझारू आन्दोलन खड़ा करेंगे। ✶

अप्रैल 2003

"अगर अमेरिका का इजारेदार पूंजीपति गुट आक्रमण व युद्ध की नीतियां बरतने पर तुला रहा, तो एक न एक दिन सारी दुनिया की जनता उसे जरूर फांसी की सजा देगी। अमेरिका के दूसरे मददगारों की भी यही दुर्गति होगी।"

– माओ त्सेतुङ, 1958

इराकी जनता के प्रतिरोध से अमेरिकी साम्राज्यवाद के दिल में हडकम्प

इराक एक और वियत्नाम बन रहा है। इतिहास से सबक सीखने से इनकार करने वाले अमेरिकी साम्राज्यवादी इराकी धरती पर इसकी कीमत चुका रहे हैं। जैसा कि इराकी राष्ट्रपति सद्दाम हुस्सेन, जो अपदस्थ होने के बाद अब अमेरिकी बलों द्वारा गिरफ्तार किया गया है, ने पहले ही चेताया था, बगदाद सचमुच अमेरिकियों का कब्रगाह में बदल रहा है। जिस साम्राज्यवादी मीडिया ने इराक पर दुराक्रमण के बाद सद्दाम के पुतले को गिराते हुए लोगों द्वारा जश्न मनाए जाने की खबरें प्रसारित की थीं, अब उसी साम्राज्यवादी मीडिया को हर दिन अमेरिका पहुंच रहे 'लाशों के झोलों' का हिसाब बताने पर मजबूर होना पड़ रहा है। इसके बावजूद भी कि अमेरिका और ब्रिटेन ने हजारों टन विनाशकारी बमों और सैकड़ों मिसाइलों का प्रयोग करके बेहिसाब तबाही मचाई हो, इराकी जनता के मनोबल में थोड़ा भी पतन नहीं हुआ। लगभग एक दशक तक इराक पर थोपे गए अमानवीय प्रतिबन्धों के चलते इराकी जनता को अनगिनत मुसीबतें झेलनी पड़ीं। जीवन-रक्षक दवाइयों और बच्चों के लिए दूध के अभाव में लाखों लोग, खासतौर पर महिलाएं और बच्चे असामयिक मौत का शिकार हो गए। ऐसी स्थिति में हुए इस दूसरे दुराक्रमणकारी हमले से इराकियों पर मानो मुसीबतों का पहाड़ ही टूट पड़ा। इसके बावजूद भी इराकी जनता ने अमेरिकी महाशक्ति के सामने घुटने नहीं टेके। इस दुराक्रमणकारी युद्ध के जवाब में लोगों ने छापामार युद्ध की पद्धति से अपना मुक्ति संग्राम शुरू कर दिया। यह संग्राम दिन-प्रतिदिन फैलता और ताकतवर बनता जा रहा है जिससे साम्राज्यवादियों की नींदें उड़ रही हैं। अमेरिकी सेनाओं पर आए दिन आत्मघाती हमले और अन्य छापामार हमले हो रहे हैं। बहादुराना कुरबानियां देते हुए इराकी जनता द्वारा किए जा रहे ये हमले खुद साम्राज्यवादियों की ही बातों में कहा जाए तो "रोजाना औसतन 10 हमलों" से शुरू होकर, धीरे-धीरे "रोजा औसतन 20 हमलों' तक बढ़ गए और 13 दिसम्बर को जब सद्दाम हुस्सेन अमेरिकी बलों के हाथों बन्दी बनाए गए तब तक "रोजाना औसतन 50 हमले" होने लगे। इन हमलों को शुरू में "जेलों से रिहा किए गए कुछ अपराधियों द्वारा की जा रही छिटफुट अराजक कार्यवाहियां" कहकर काट देने वाले अमेरिका के सैन्य और प्रशासनिक अधिकारियों को अब यह मान लेने पर मजबूर होना पड़ा कि "अब हम एक मुकम्मल छापामार युद्ध का सामना कर रहे हैं।" 20 मार्च को इराक पर अमेरिका के दुराक्रमण के बाद वहां पर जारी घटनाक्रम दुनिया की उत्पीड़ित जनता को बेहद उत्साहित कर रहा है। इराक की घटनाओं से अतीत के उस मुक्ति-संग्राम की याद ताजा हो रही है जिसे वियत्नाम की बहादुर जनता ने अमेरिकी दुराक्रमणकारी बलों के खिलाफ लड़ा था। अब दुनिया भर की जनता माओ त्सेतुङ के इस कथन को अच्छी तरह से समझ रही है कि **साम्राज्यवाद ऊपरी तौर पर कितना ताकतवर भी क्यों न लगे, लेकिन वह दरअसल कागजी बाघ ही है।**

> ***"हर जगह मनमाने ढंग से जुल्म ढाने के कारण, अमेरिकी साम्राज्यवाद ने अपने को समूची दुनिया की जनता का दुश्मन बना लिया है और अपने को अधिकाधिक अलगाव की स्थिति में डाल दिया है। उन लोगों को, जो गुलाम नहीं बनना चाहते, अमेरिकी साम्राज्यवादियों के परमाणु-बमों और उद्जन-बमों से कदापि नहीं डराया जा सकता। अमेरिकी हमलावारों के खिलाफ समूची दुनिया की जनता का प्रचण्ड ज्वार एक अदम्य शक्ति है। अमेरिकी साम्राज्यवाद और उसके गुर्गों के खिलाफ समूची दुनिया की जनता के संघर्षों में निस्सन्देह और अधिक महान विजयें प्राप्त होंगी।"***
>
> **– माओ त्सेतुङ, 1964**

धीरे-धीरे तेज होता जन प्रतिरोध

अमेरिकी और ब्रितानी सेनाओं ने अपने पास मौजूद अत्याधुनिक हथियारों और अन्य फौजी साजो-सामान के जरिए इराक पर अंधाधुंध हमले किए। हवाई जहाजों के जरिए मनमाने बम बरसाए। इराक के पास सामूहिक विनाश के हथियार होने के बहाने इस युद्ध को छेड़ने वाले साम्राज्यवादियों ने इराक में आवसीय इलाकों, अस्पतालों, पानी की परियोजनाओं, पुलों, बिजली परियोजनाओं आदि पर बेहद विनाशकारी बमबारी करके हजारों लोगों को मौत की नींद सुला दी। एक अनुमान के मुताबिक इस दुराक्रमणकारी युद्ध में अब तक लगभग 25 हजार इराकियों की जानें गईं। सम्पत्तियों की तबाही का कोई हिसाब नहीं। युद्ध के चलते लगभग एक करोड़ लोगों को रोजगार के अवसर गंवाने पड़े। "इराकियों को आजादी" दिलवाने का ढिंढ़ोरा पीटते हुए इस दुराक्रमणकारी युद्ध की रचना करने वाले साम्राज्यवादियों के कब्जे के बाद इराकी जनता को कम से कम पीने के लिए पानी भी नहीं मिल रहा है। सद्दाम के शासन को ढहाकर इराक में जनवाद की स्थापना करने का स्वांग रचने वाले इन साम्राज्यवादी डकैतों ने लोगों को रोटी, कपड़ा, ईंधन, बिजली जैसी न्यूनतम सुविधाओं से भी वंचित कर दिया। कई हजारों सालों से जमी हुई एक सभ्यता को ही तबाह करने के नापाक इरादे से किए गए इस युद्ध को मानवता के खिलाफ युद्ध कहना शत प्रतिशत मुनासिब होगा।

लेकिन इराकी जनता ने इन सब को धैर्य के साथ झेल लिया। अमेरिकी बलों का हर मुमकिन तरीके से मुकाबला करना शुरू किया। लोग कई छापामार ग्रुपों में संगठित हो गए। हथियारबन्द हो गए। नागरिक सुविधाओं की मांग करते हुए कई जुझारू प्रदर्शन किए। खुलेआम सड़कों पर आकर अमेरिकी सेनाओं के जुल्म-अत्याचारों के खिलाफ नारेबाजी करना वहां रोजमर्रा का नज़ारा बन गया। सद्दाम के शासन में मंत्री या फौजी अफसर के पद पर काम करने वाले लोगों और बाथ पार्टी के कुछ नेताओं ने जन प्रतिरोध को संगठित किया। शिया मुसलमानों के कुछ ग्रुप भी विदेशी सेनाओं के खिलाफ छापामार युद्ध चला रहे हैं। अल फरूक़ ब्रिगेड नामक एक छापामार संगठन ने अमेरिकी बलों पर कई शानदार व जुझारू हमले किए। साथ ही, अलग-अलग अरब देशों से आए हुए वलन्टियर भी इराकियों के जन प्रतिरोध में भाग ले रहे हैं। व्यापक पैमाने पर हो रहे इन छापामार हमलों से असुरक्षा की भावना से ग्रसित होने वाले अमेरिकी सैनिक इराकी जनता पर उन्मादपूर्ण हमले कर रहे हैं। बिना किसी उकसावे के ही गोलियां चलाना, मनमाने ढंग से लोगों को मार डालना, महिलाओं के साथ बलात्कार, तलाशी मुहिम,

प्रदर्शनकारियों पर गोलीबारी करना आदि अमेरिकी सेनाओं के रोजमर्रा के काम बन गए। अमेरिकी बल पाशविक हमले कर रहे हैं ताकि इराकी लोगों के प्रतिरोध को दबा दिया जा सके। इसके बावजूद इराकी जनता अटूट आत्मविश्वास के साथ, अपनी मातृभूमि की मुक्ति के लिए अनमोल कुरबानियां देते हुए साम्राज्यवादियों के दिल में हड़कंप मचा रहे हैं। विदेशी दुराक्रमण को समाप्त करने के लिए इराकी स्त्री-पुरुष मानव-बम बनकर अपने प्राणों को तिनके के समान न्यौछावर कर रहे हैं।

अमेरिकियों की रणनीति को मिली ठोकर

इराक पर अमेरिका के कब्जे के बाद इराकी सेना नाटकीय अंदाज में गायब हो गई। सैनिक अपने हथियारों के साथ लोगों में घुलमिल गए। परम्परागत युद्ध से अमेरिका का मुकाबला करना नामुमकिन है, इस सचाई को समझकर उन्होंने पहले ही तैयारियां कर लीं ताकि अमेरिका को दीर्घकालिक छापामार युद्ध में घसीटा जा सके। अमेरिका का यह घमण्ड कि वह अपने पास मौजूद ढेरों शस्त्रास्त्रों से किसी भी देश को घुटने टेकने पर मजबूर कर सकता है, इराक में बुरी तरह चोट खा गया। इसके पहले, 1991 में जब उसने इराक पर पहला दुराक्रमणकारी युद्ध किया था और 1998 में उसने युगोस्लोविया पर और 2001 में अफगानिस्तान पर हमला किया था, तब उसने हवाई बमबारी करके इन देशों में व्यापक तबाही मचाकर उन पर काबू पाने की रणनीति अपनाई थी। वियत्नाम के अपने कड़वे अनुभवों के बाद से अमेरिका जहां तक सम्भव हो जमीनी युद्ध से बचता आ रहा है। चूंकि अफगानिस्तान में उसे नार्दर्न एलिएन्स के रूप में दलाल तैयार मिले थे, इसलिए वहां जमीन पर लड़ाई किए बिना ही तालिबान के शासन को खत्म करने में कामयाब हुआ था। वर्तमान इराक युद्ध में भी उसने इसी प्रकार की रणनीति अपनाने की योजना बनाई थी ताकि वियत्नाम जैसा अनुभव फिर से झेलना न पड़ सके। अमेरिका ने सोचा था कि हवाई हमलों के जरिए ज्यों ही इराक पर शिकंजा कसा जाएगा, तुरन्त ही अपने पिट्ठू देशों से सेनाएं बुलाकर तैनात की जाएं ताकि अपने सैनिकों की मौतों को टाला जा सके। लेकिन फ्रान्स, जर्मनी इत्यादि अमीर देशों के साथ-साथ भारत जैसे गरीब देशों ने भी लोगों के विरोध से डरकर अमेरिकी कमान में अपनी सेनाओं को इराक भेजने से इनकार कर दिया। इससे अमेरिका को निराशा ही हाथ लगी। जिस जमीनी लड़ाई से वह कन्नी काट रहा था, आज ठीक उसी लड़ाई में वह बुरी तरह फंस गया।

सैन्य अनुमानों में उलट-फेर

सबसे पहले अमेरिका और ब्रिटेन को कूटनैतिक पराजय तब झेलनी पड़ी, जब सुरक्षा परिषद में इराक पर दुराक्रमण को मंजूरी मिलने की उनकी उम्मीदों पर फ्रान्स और रूस के विरोध के चलते पानी फिर गया। इससे उन्हें गुप्त रूप से बैठक करके बहुत कम देशों के समर्थन से एकतरफा ही युद्ध में उतरना पड़ा। अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने इस बात पर न सिर्फ यकीन ही किया बल्कि लोगों को भी यकीन दिलाने की कोशिश की कि ज्यों ही उनकी सेनाएं इराक में कदम रखेंगी, सद्दाम के शासन से तंग आ चुके इराकी लोक और खासतौर पर सद्दाम के कट्टर दुश्मन समझे जाने वाले शिया मुसलमान उनका फूलों से स्वागत करेंगे और उनकी सेनाएं बग्दाद में बेरोकटोक ही कदम रख लेंगी। लेकिन न तो ऐसा कोई स्वागत और न ही शियाओं का बहु-प्रचारित विद्रोह देखने को मिला। उन लोगों ने भी अमेरिका की उम्मीद के मुताबिक मदद नहीं की जिन्हें अमेरिका के पिट्ठू माने जाते हैं।

साम्राज्यवादियों ने यह भ्रम भी पाले रखा था कि इराक जल्द ही घुटने टेक देगा। अमेरिकियों ने खुलेआम ही यह घोषणा की कि वे तीन-चार हफ्तों में इराक पर पूरी तरह कब्जा कर लेंगे। लेकिन शुरू से ही अमेरिका के सैन्य अनुमानों में भारी उलट-फेर होता आ रहा है। अमेरिका को इराक युद्ध में "विजय" हासिल करने की घोषणा करने में पूरे 50 दिन लग गए। लेकिन मजे की बात यह है कि इस "विजय" के बाद ही असली युद्ध – मुक्ति युद्ध – शुरू हो गया। 30 हजार सेनाओं के जरिए इराक को काबू करते हुए तीन महीनों के भीतर कठपुतली सरकार खड़ा कर सकने का सपना देखने वाले अमेरिकी साम्राज्यवादियों को नाकामी ही हाथ लगी। अभी भी इराक में डेढ़ लाख से ज्यादा सेनाओं के मौजूद रहने के बावजूद अब और 30 हजार सेनाओं को वहां भिजवाने की तैयारियां चल रही हैं। ब्रिटेन, स्पेइन, जापान, दक्षिण कोरिया, इटली आदि देशों की दसियों हजार सेनाएं जो वहां मौजूद हैं सो अलग। हर दिन कहीं न कहीं अमरिकी सैनिक इराकी छापामारों के हाथों मारे जा रहे हैं और उनकी लाशें अमेरिका पहुंच रही हैं। इससे अमेरिकी जनता में गुस्सा बढ़ रहा है और सरकार पर दबाव बढ़ता जा रहा है। इससे अमेरिका को 85 देशों से सेनाएं भेजने की अपील करने पर मजबूर होना पड़ा। यहां तक कि बांग्लादेश जैसे बेहद गरीब देश से भी सेनाएं भेजने की अपील करनी पड़ी।

अमेरिकी सेनाओं के अत्याचारों के खिलाफ इराकियों का प्रदर्शन

दुष्प्रचार की आंधी को विश्व जनता ने किया नाकाम

अमेरिका और ब्रिटेन ने इराक पर दुराक्रमण के लिए विश्व जनता की मंजूरी हासिल करने के लिए जी-तोड़ कोशिश की। अपने टुकड़ों पर पलने वाले प्रसार माध्यमों का इस्तेमाल करते हुए उन्होंने झूठों को बड़े पैमाने पर प्रचारित किया। गोबेल्स के इस फासीवादी सिद्धान्त को कि एक झूठ को सौ बार दोहराने से वह एक दिन जरूर सच हो जाएगा, पूरी तरह अपनाने वाले इन साम्राज्यवादियों ने इस प्रचार की आंधी छेड़ी थी कि इराक के पास सामूहिक विनाश के हथियार मौजूद हैं और इराक में सद्दाम का शासन रहने से दुनिया को बहुत बड़ा खतरा है।

दुष्प्रचार का यह हमला इतना व्यापक था कि अधा से ज्यादा अमेरीकी यह मानने लगे थे कि इराक के बारे में बुश जो भी कह रहा है उसमें सचाई है। लेकिन युद्ध के समाप्त होने की घोषणा हुए 8 महीने बीतने के बाद भी इराक में एक भी सामूहिक विनाश का हथियार नहीं पकड़े जाने से अब काफी लोग यह समझ रहे हैं कि यह सारा प्रचार झूठा था। अमेरिका और ब्रिटेन में ऐसे आरोप खुलेआम ही सुनाई दे रहे हैं कि दुराक्रमणकारी युद्ध के लिए जनता की मंजूरी हासिल करने के लिए गलत खुफिया रिपोर्टें पेश करके जनता को छला गया। यहां तक कि विपक्षी पार्टियों ने भी सरकार की यह कहकर निंदा की कि इराक पर दुराक्रमण सही नहीं था और कि अमेरिकी विदेश नीति की दोबारा समीक्षा करने की जरूरत है। अमेरिका की अत्यधिक जनता, खासतौर पर सैनिकों के परिवार और 'वियत्नाम वेटरन्स' कहलाने वाले भूतपूर्व सैनिक यह मांग कर रहे हैं कि इराक से तुरन्त ही सेनाओं को वापस बुलाया जाए। ब्रिटेन समेत यूरोपीय यूनियन के सभी देशों की जनता यह मान रही है कि विश्व शांति के लिए जार्ज बुश से ही ज्यादा खतरा है। विश्व जनता ने अब और भी साफ तौर पर जान लिया कि इराक पर हमला इसलिए नहीं किया गया कि उसके पास सामूहिक विनाश के हथियार थे, बल्कि इसलिए किया गया क्योंकि अमेरिका वहां मौजूद तेल के भण्डारों को अपने हाथ में लेकर मुनाफा कमाना चाहता है और इस तरह समूचे पश्चिम एशिया पर अपनी पकड़ मजबूत बनाना चाहता है। पिछले माह जब बुश ने लन्दन का दौरा किया तब लाखों लोगों ने उसका जमकर विरोध किया। यह इस बात का एक उदाहरण भर है कि साम्राज्यवादी देशों में भी जनता बुश और ब्लेइर की नीतियों का कितना विरोध करते हैं।

अमेरिका में बढ़ता विरोध

जबसे इराक पर दुराक्रमण की तैयारियां शुरू हुईं तभी से अमेरिकी जनता ने विरोध प्रकट करना शुरू किया। लेकिन अब जबकि "लाशों के झोले" रोजाना अमेरिका पहुंचने लगे, तो अमेरिकी जनता ने बुश की नीतियों का जमकर विरोध करना शुरू किया। इराक से सेनाओं की वापसी की मांग से कई संगठनों का निर्माण हुआ। उन्होंने कई प्रकार के विरोध आन्दोलन शुरू कर दिए। इस विरोध आन्दोलन में इसलिए ज्यादा से ज्यादा लोग शामिल हो रहे हैं क्योंकि अमेरिका के इस दुराक्रमणकारी युद्ध से अमेरिकी जनता को अनगिनत तकलीफों का सामना करना पड़ रहा है। अमेरिकी सेना में, खासतौर पर थल सेना में मौजूद अत्यधिक लोग गरीब अश्वेत परिवारों और लाटिनी अमेरिकी परिवारों से ही हैं। जनता इस बात से बेहद नाराज है कि मुट्ठी भर कार्पोरेट संस्थाओं के मुनाफों की खातिर उनकी बच्चों की बलि दी जा रही है। इराक में मौजूद अनेक अमेरीकी सैनिकों ने रोज-रोज हो रहे छापामार हमलों से असुरक्षा की भावना से ग्रसित होकर और छुट्टियां न मिलने से नाराज होकर खुद को गोली मार ली। इससे सैनिकों के परिवारों में सरकारी नीतियों के प्रति गुस्सा और भी बढ़ता जा रहा है। इस युद्ध के लिए पहले 80 अरब डॉलर खर्च होने का अनुमान था जो अब काफी बढ़ चुका है। यह बोझ भी मुख्य रूप से गरीब अमेरिकियों पर ही लादा जा रहा है। जनता को मिलने वाली कई सुविधाओं में कटौती कर, वेतनों और पेन्शनों में कटौती कर और करों को बढ़ाकर सरकार यह राशि जुटा रही है। इससे जनता में और भी विरोध बढ़ रहा है। हाल ही में हेलिबर्टन नामक एक कम्पनी का यह घोटाला उजागर हुआ कि उसने इराक में लड़ रही अमेरीकी सेनाओं को ज्यादा कीमत पर तेल मुहैया करवाकर 9 करोड़ डॉलर कमा लिया है। इस खबर से अमेरिकी जनता को जले पर नमक जैसा लगा। गौरतलब है कि इस हेलिबर्टन कम्पनी के साथ अमेरीकी उप-राष्ट्रपति डिक चेनी का रिश्ता है। इस प्रकार, यह बात न सिर्फ अमेरिकी जनता, बल्कि समूचे विश्व की जनता अच्छी तरह समझ रही है कि इस युद्ध से कौन मुनाफा कमा रहे हैं, इस युद्ध में किनकी बलि दी जा रही है और इस युद्ध का बोझ कौन उठा रहे हैं।

तेल लूटने की रणनीति टांय-टांय फिस्स

यह जगजाहिर है कि इस दुराक्रमणकारी युद्ध के कारणों में मुख्य है इराकी तेल पर नियंत्रण कायम कर लेना। गहरे संकट में फंसी अमेरिकी अर्थव्यवस्था को उबारने के लिए यह युद्ध जरूरी भी था। अमेरिकी सरकार के नीति-निर्देशकों में ज्यादातर लोगों को हेलिबर्टन, बेक्टेल जैसी बड़ी तेल कम्पनियों के साथ सम्बन्ध हैं। और ज्यों ही युद्ध की समाप्ति की घोषणा हुई, इन्होंने 'पुनरनिर्माण' के नाम से इराक पहुंचकर अपनी लुटेरी नीतियों को लागू करने की जो योजना बनाई, उसमें इराकी जनता के शानदार प्रतिरोध के चलते खलल पड़ रही है। इराकी जनता के जबर्दस्त हमलों के चलते अमेरिकी तेल कम्पनियां अभी तक इराक में तेल का उत्पादन शुरू ही नहीं कर सकी हैं। तेल कम्पनियों के दफ्तरों पर, तेल की पाइप लाइनों पर किए जा रहे बम हमलों के कारण इन डकैतों की लुटेरी योजनाएं टांय-टांय फिस्स हो रही हैं।

इराकियों के प्रतिरोध से विश्व पर आधिपत्य जमाने की अमेरिका की रणनीति को काफी हद तक धक्का पहुंचा है। अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने यह सोचा था कि इराक पर दुराक्रमण करके वो पूरे पश्चिम एशिया को अपनी मुट्ठी में कर ले सकेंगे। इराक में एक कठपुतली सरकार की स्थापना करके उसे एक आधार के रूप में इस्तेमाल करते हुए अरब जगत् पर दबदबा कायम करना साम्राज्यवादियों का सपना था। इराक पर दुराक्रमण पूरा होने के बाद सीरिया और इरान पर जरूरत पड़ने से हमला करना या फिर दबाव डालकर इन देशों की सरकारों को गिराकर अपने पिट्ठुओं को सत्ता में बिठाना अमेरिकी डकैतों की सोची-समझी साजिश थी जोकि जगजाहिर भी थी। यही वजह थी कि एक तरफ इराक पर युद्ध करते हुए ही उसने इन दो देशों को धमकियां बढ़ा दीं। जानकारों का अनुमान है कि अमेरिका ने चाहा था कि ज्यों ही इराक उसकी मुट्ठी में आएगा, साउदी अरब में मौजूद उसके सैन्य बलों के एक बड़े हिस्से को वापस बुलाया जाए। साउदी अरब में अमेरिकी सैन्य बलों पर बढ़ रहे हमलों से और कुल मिलाकर इस देश में अमेरिका के खिलाफ बढ़ रहे माहौल से अमेरिका को खतरा महसूस हो रहा था। अभी तक पश्चिम एशिया में साउदी अरब, कुवैत और क़तर ही ऐसे देश हैं जो अमेरिका के अड्डे कहे जा सकते हैं। लेकिन इराक में जब उसकी नहीं चली तो सारी योजनाएं नाकाम हो गईं। हाल के महीनों में अफगानिस्तान में दोबारा संगठित हो रहे तालिबानियों को कुचलने के नाम पर अमेरिका ने अपनी सैन्य कार्यवाहियों में तेजी लाई है और वह लगातार मासूम लोगों की जानें ले रहा है। इससे अफगानी जनता में और पूरे विश्व की जनता में अमेरिकी साम्राज्यवाद के प्रति तीखी नफरत बढ़ रही है। दूसरी तरफ इराकी प्रतिरोध ने दुनिया को फिर एक बार यह भरोसा दिलाया कि अत्यन्त ताकतवर माने

जाने वाले अमेरिकी साम्राज्यवाद का भी छापामार युद्ध के जरिए मुकाबला किया जा सकता है। इस बढ़े हुए विश्वास के साथ निश्चत रूप से विश्व जनता अमेरिका की विश्व पर आधिपत्य की रणनीति को मात दे देगी।

इराकियों के प्रतिरोध के कुछ रोचक नमूने

साम्राज्यवादी इस कोशिश में एड़ी-चोटी का जोर लगा रहे हैं कि इराकी जनता के हमलों को आतंकवादी हमलों के रूप में चित्रित किया जाए। लेकिन ये सारे हमले जनता की मदद से, जनता की सक्रिय भागीदारी व सहयोग से और जनता की तमन्नाओं के मुताबिक ही किए जा रहे हैं – यह बात सचाइयों पर नजर रखने वालों को आसानी से समझ में आएगी। ये हमले विविधता के साथ संचालित किए जा रहे हैं। अमेरिका आदि आक्रमणकारी देशों के सैन्य बलों पर तथा अमेरिका के पिट्ठू बन कर काम कर रहे इराक के राजनीतिक व धार्मिक नेताओं पर जनता हमले कर रही है। इराकी योद्धाओं ने उस होटल पर भी रॉकेटों से हमला किया जहां अमेरिकी रक्षा विभाग के सहायक मंत्री उल्फोविट्ज ठहरा हुआ था। इस हमले में वह बाल-बाल बच गया। इराक में अमेरिकी सैनिकों की मौत की खबरें बुश को काफी परेशान कर रही हैं। उसका डर यह है कि 1991 में इराक पर पहले दुराक्रमण युद्ध के बाद हुए चुनावों में उसके पिता की जो दुर्गति हुई थी, शायद 2004 में होने वाले चुनावों में खुद को भी वही झेलनी पड़ सकती है। दूसरी तरफ उसके सैनिकों का मनोबल दिन-प्रतिदिन बुरी तरह गिरता जा रहा है और कुछ सैनिक व अधिकारी इराक से सेना को वापस बुलाने के बयान खुलेआम ही जारी कर रहे हैं। इन घटनाओं से बुश को ऐसा महसूस होने लगा कि विश्व पर आधिपत्य की उसकी रणनीति को धक्का लग रहा है। इसीलिए बुश को रातोंरात एक चोर की तरह, काले रंग से पुते कांचों वाले एक हवाई जहाज में उड़ान भरकर बग्दाद आकर अपने सैनिकों की पीठ थपथपाकर फिर रातोंरात ही चले जाने पर मजबूर होना पड़ा। बुश इस प्रकार के कई और सस्ते तिकड़म कर रहा है ताकि अमेरिकी मतदाताओं को लुभाया जा सके।

इसके बावजूद इराकियों का प्रतिरोध बिना रुके जारी ही है। देशभक्त इराकियों का यह नारा चारों ओर गूंज रहा है कि विदेशी सेनाएं इराक छोड़ दें। विश्वविद्यालयों के परिसरों में हर दिन पर्चे बंट रहे हैं। हर दिन साम्राज्यवाद के खिलाफ नारे लगाए जा रहे हैं। इराकी लोग अपने घरों को ही बंकर बनाकर और अपने शरीरों को ही बम बनाकर दुश्मन के साथ जूझ रहे हैं। अमेरिका का समर्थन करने वाले देशों के दूतावासों और यहां तक कि संयुक्त राष्ट्र संघ के दफ्तर को भी इराकियों ने नहीं बख्शा जिसने दस साल से ज्यादा समय तक इराक पर अमानवीय प्रतिबन्ध लागू करवाने और उसे विनाश के कगार पर लाने में अमेरिकी साम्राज्यवादियों के हाथों में औजार की तरह काम किया। इराकी छापामार किसी अमेरिकी सैनिक का सफाया करते हैं तो चन्द मिनटों में ही वहां जुट जाने वाले लोग अमेरिकियों की लाशों पर लात मारते हैं। जब छापामार अमेरिकियों की किसी गाड़ी को उड़ा देते हैं तो बाद में उसके मलबों पर चढ़कर लोग खुशी से जश्न मनाते हैं। ऐसी घटनाएं जो सुनाई दे रही हैं, ये सब उनके मन में सुलग रही नफरत की अभिव्यक्ति ही हैं। बग्दाद में जोर्डान के दूतावास पर आत्मघाती बम हमला करके उसे तबाह करने के तुरन्त बाद सैकड़ों लोगों ने उसके मलबों में घुस कर जोर्डान के राजा की तस्वीर को नीचे गिराकर पैरों से रौंद दिया जो तबाह होने से बच गई थी। यह इराकियों की उच्च स्तर की राजनीतिक चेतना का परिचायक था। इराकी लोग जोर्डान के राजा के खिलाफ बेहद गुस्से में हैं क्योंकि उसने इराक पर अमेरिकी दुराक्रमण का समर्थन किया।

गश्त पर निकलने वाले अमेरिकी सैनिकों को स्नाइपरों द्वारा घात लगाकर गोली मारने की घटनाएं इराक में आए दिए घट रही हैं। इराकी छापामार आमतौर पर स्वचालित रॉकेटों और जमीन से

"जिस तरह दुनिया में कोई भी चीज ऐसी नहीं है जिसका स्वरूप दोहरा न हो (यह विपरीत तत्वों की एकता का नियम है), उसी तरह साम्राज्यवाद और तमाम प्रतिक्रियावादियों का स्वरूप दोहरा है – वे असली बाघ भी हैं और कागजी बाघ भी। अतीत काल के इतिहास में दास-मालिक वर्ग, सामन्ती जमींदार वर्ग और पूंजीपति वर्ग राजसत्ता पर अधिकार करने से पहले और उसके बाद भी कुछ समय तक बड़े ओजस्वी, क्रांतिकारी और प्रगतिशील रहे; वे असली बाघ थे। लेकिन समय बीतने पर, चूंकि उनके विपरीत तत्व – दास वर्ग किसान वर्ग और सर्वहारा वर्ग – कदम-ब-कदम शक्तिशाली होते गए, उनके खिलाफ संघर्ष करते रहे तथा ज्यादा से ज्यादा अजेय बनते गए, इसलिए ये शासक वर्ग कदम-ब-कदम अपने उल्टे तत्वों में बदल गए, प्रतिक्रियावादियों में बदल गए, पिछड़े हुए लोगों में बदल गए, कागजी बाघों में बदल गए। और अन्त में जनता द्वारा उन्हें उखाड़ फेंका गया या उखाड़ फेंका जाएगा। प्रतिक्रियावादी, पिछड़े हुए और सड़े-गले वर्ग जनता के खिलाफ अपने आखिरी जिन्दगी-मौत के संघर्षों में भी इस दोहरे स्वरूप को बनाए रखते हैं। एक ओर तो वे असली बाघ हैं, आदमियों को खाते हैं, लाखों-करोडों आदमियों को खाते है। जनता के संघर्ष के कार्य को मुश्किलों और मुसीबतों के जमाने से गुजरना पड़ता है और बहुत टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता तय करना पड़ता है। चीन में साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और नौकरशाही-पूंजीवाद के शासन को नष्ट करने में चीनी जनता को सौ साल से ज्यादा समय लगा और करोड़ों लोगों की कुरबानी देनी पड़ी। तब कहीं 1949 में विजय प्राप्त की जा सकी। जरा सोचिए तो! क्या ये जिन्दा बाघ नहीं थे, लोहे के बाघ नहीं थे, असली बाघ नहीं थे? लेकिन अन्त में ये कागजी बाघों में बदल गए, मुर्दा बाघों में बदल गए, पनीर के बाघों में बदल गए। ये ऐतिहासिक तथ्य हैं। क्या लोगों ने इन तथ्यों को देखा या सुना नहीं है? बेशक इनकी तादाद कई हजार और दसियों हजार हैं। कई हजार और दसियों हजार इसलिए कि साम्राज्यवाद और सभी प्रतिक्रियावादियों को सारतत्त्व की दृष्टि से, दीर्घकालीन दृष्टि से, राजनीतिक दृष्टि से, उनकी असलियत के मुताबिक कागजी बाघ के रूप में ही देखना चाहिए। इसी के आधार पर हमें अपनी रणनीति सम्बन्धी विचारों का निर्माण करना चाहिए। दूसरी तरफ वे जिन्दा बाघ भी हैं, लोहे के बाघ भी हैं, असली बाघ भी हैं, जो लोगों को खा सकते हैं। इसी के आधार पर हमें कार्यनीति और युद्ध कला सम्बन्धी अपने विचारों का निर्माण करना चाहिए।"

– माओ त्सेतुङ, 1958

हवा में मार करने वाले मिस्साइलों का प्रयोग कर रहे हैं। इतने सुनियोजित ढंग से वे अमेरिकी सैनिकों पर हमले कर रहे हैं जिसकी अमेरिकी कोई कल्पना ही नहीं कर पा रहे हैं। पर अमेरिकी सैनिक इराकी विद्रोहियों को दबाने के बहाने अमानवीय कत्लेआमों को अंजाम दे रहे हैं। आए दिन घरों पर छापेमारी करना, संदिग्ध लोगों की व्यापक धरपकड़ या गोली मार देना आदि अमेरिकियों के रोजमर्रा के काम बन गए। इन सभी का मुकाबला करते हुए ही इराकी अपना प्रतिरोध जारी रखे हुए हैं। नीचे पेश की जा रही कुछ कार्यवाहियों से इराक में जारी जबर्दस्त मुक्ति संग्राम की सिर्फ एक झलक भर मिल जाती है।

- 1 मई को युद्ध की समाप्ति की घोषणा से पहले और उसके बाद, अमेरिका के कहे मुताबिक, 500 से ज्यादा अमेरिकी सैनिक मारे गए। सैकड़ों अन्य सैनिक घायल हो गए। गठबन्धन सेनाओं के 70 से ज्यादा सैनिक मारे गए।
- जून में की गई एक कार्यवाही में इराकी छापामारों ने हवाई अड्डे के निकट एक अमेरिकी कैम्प पर मिस्साइलों से आक्रमण किया जिसमें कई हेलिकॉप्टर तबाह कर दिए गए, 20 से ज्यादा अमेरिकी सैनिक मारे गए और 30 से ज्यादा घायल हो गए।
- 25 अक्टूबर को तिकरित शहर में इराकियों ने एक ब्लैक हाक हेलिकाप्टर को गिरा दिया जिसमें सवार एक अमेरिकी सैनिक घायल हो गया।
- 2 नवम्बर को बग्दाद के पश्चिम में स्थित फलूखा में चिनुक नामक अमेरिकी हेलिकाप्टर को गिराया गया जिसमें 16 सैनिक मारे गए।
- 7 नवम्बर को तिकरित शहर के निकट ब्लैक हाक हेलिकाप्टर को इराकी छापामारों ने उड़ा दिया जिसमें छह अमेरिकी सैनिक मारे गए।
- 16 नवम्बर को किए गए एक अन्य हमले में 17 अमेरिकी सैनिक मारे गए और पांच घायल हो गए।
- 30 नवम्बर को किए गए एक और हमले में स्पेइन के 7 खुफिया अधिकारी और जापान के दो अन्य खुफिया अधिकारी कुत्ते की मौत मारे गए।

सद्दाम की गिरफ्तारी से जन प्रतिरोध नहीं रुकता !

13 दिसम्बर को सद्दाम हुस्सेन को उसके गृहनगर तिकरित के निकट एक गांव में अमेरिकी बलों ने बड़े नाटकीय ढंग से गिरफ्तार किया। इसे अपनी शानदार सफलता बताते हुए अमेरिकी शासकों ने जश्न मनाया। जर्मनी, फ्रान्स जैसे साम्राज्यवादी देशों ने भी सद्दाम की गिरफ्तारी का स्वागत किया जो अमेरिका के इस एकतरफा फैसले से नाराज चल रहे थे कि जिन देशों ने युद्ध में उसका सहयोग नहीं किया उन्हें "पुनरनिर्माण" के ठेके नहीं दिए जाएंगे। वे आज अमेरिका के सुर में सुर मिलाकर सद्दाम को कड़ी सजा देने की मांग कर रहे हैं। साम्राज्यवादियों की जूठन खाकर जीने वाले प्रसार माध्यमों ने स्वाभाविक रूप से ऐसी खबरें फैलाईं कि सद्दाम की गिरफ्तारी से खुश होकर इराकी जश्न मना रहे हैं। ये खबरें भी उतनी ही झूठी हैं जितनी कि सद्दाम के पुतले को गिराने पर इराकियों द्वारा जश्न मनाए जाने की खबरें थीं। सद्दाम एक तानाशाह जरूर था, लेकिन लगभग डेढ़ दशक से साम्राज्यवादियों के आगे सर न झुकाने वाले और साम्राज्यवादियों के दबाव में न आने वाले नेता के रूप में इराकी जनता में उसकी छवि बनी हुई है। समूचे अरब जगत् में उसकी यह छवि है कि वह इज्राएली यहूदीवादियों, जो अमेरिकियों के पिट्ठू हैं, के खिलाफ खड़ा एक धर्मनिरपेक्षतावादी नेता है। इराकी जनता विदेशी सेनाओं द्वारा आक्रमण करके अपने राष्ट्राध्यक्ष को अपदस्थ करने और अब उसे गिरफ्तार करने की तीखी भर्त्सना कर रही है। वे इसे अपने देश की प्रभुसत्ता पर ही पाशविक हमला मान रहे हैं। अगर सद्दाम हुस्सेन अपराधी है तो उस पर मुकदमा चलाने या उसे सजा देने का अधिकार सिर्फ इराकी जनता को ही है। समूची दुनिया को अपनी मुठ्ठी में बांधकर रखने की दरिन्दगी भरी कोशिश करने वाले साम्राज्यवादी डकैतों को किसी भी दूसरे देश के किसी भी नेता को न तो गिरफ्तार करने और न ही उस पर मुकदमा चलाने का नैतिक अधिकार है। दरअसल सबसे पहले अनगिनत युद्ध अपराधों के लिए बुश और ब्लेइर को सजा देनी चाहिए न कि सद्दाम को। बाकी तमाम अपराधों को छोड़ भी दें तो, इस एक मात्र अपराध के लिए भी इन दोनों जोड़ीदारों को सरेआम फांसी पर लटका देना चाहिए जो इन्होंने इराक के पास सामूहिक विनाश के हथियार होने का आरोप लगाते हुए सारी दुनिया को धोखा देकर दुराक्रमण युद्ध छेड़कर हजारों लोगों की जानें लेकर किया। दुनिया भर में कई तानाशाहों की मदद कर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से लाखों लोगों की हत्या करने वाले इन अव्वल तानाशाहों को दरअसल जनवाद के बारे में, इन्साफ के बारे में या न्यायिक मुकदमे के बारे में बोलने का नैतिक अधिकार ही नहीं है। सद्दाम की गिरफ्तारी और उसे मौत की सजा देने की अमेरिकी साम्राज्यवादियों की कोशिशों का पूरी दुनिया को विरोध करना चाहिए।

साम्राज्यवादी ये सोच रहे हैं कि सद्दाम की गिरफ्तारी से इराकी लोगों की प्रतिरोधी कार्यवाहियां थम जाएंगी। साम्राज्यवादियों की धमकियों और हमलों से न डिगने वाले नेता का पकड़ा जाना इराकियों के लिए निश्चित रूप से पीड़ादायक ही है। लेकिन जब तक विदेशी दुराक्रमण जारी रहेगा, जब तक इराक की धरती पर पराए देशों की सेनाएं मौजूद रहेंगी और जब तक साम्राज्यवादी इराक के संसाधनों को लूटते रहेंगे तब तक इराकी लोगों का प्रतिरोध जारी ही रहेगा। दरअसल यह सोचना गलत ही होगा कि इराक में छापामार हमले सिर्फ सद्दाम के कारण या बाथ पार्टी के कारण हो रहे हैं। कई मिलिटेन्ट संगठन और अन्य पार्टियां अलग-अलग और तालमेल के साथ भी ये हमले कर रही हैं। विश्व जनता को चाहिए कि वह इराकी लोगों का तहेदिल से समर्थन करे जो अपने देश की मुक्ति के लिए लड़ रहे हैं। उनके संघर्षों के प्रति भाईचारा प्रकट करना चाहिए। दुनिया के समूचे लोगों को साम्राज्यवाद के खिलाफ, खासतौर पर अमेरिकी साम्राज्यवाद के खिलाफ जुझारू संघर्ष छेड़ देने चाहिए, जो नम्बर एक दुश्मन है। लोगों को अपने-अपने देशों में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद की रोशनी में जारी जनयुद्धों, क्रान्तिकारी आन्दोलनों, राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों तथा अन्य जन आन्दोलनों में भाग लेते हुए साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष को तेज करना चाहिए। अमेरिकी साम्राज्यवादी दैत्य पर चारों ओर से और सांझे तौर पर वार करना होगा। अमेरिकी-ब्रितानी उत्पादों का बहिष्कार करना और इन देशों की बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को मार भगाना हमारे संघर्ष का स्वरूप होना चाहिए। दुनिया भर में यह आवाज बुलन्द करनी चाहिए कि इराक से, अफगानिस्तान से और दुनिया के अन्य हिस्सों से अमेरिकी सैन्य बलों को वापस लो। ★

13 दिसम्बर 2003

इराकी जनता का बहादुराना प्रतिरोध तिलमिलाता अमेरिकी साम्राज्यवाद

इराकियों को आजादी दिलवाने के बहाने अमेरिका के नेतृत्व में गठबन्धन सेनाओं द्वारा इराक के खिलाफ छेड़े गए अन्यायपूर्ण युद्ध के अब डेढ़ साल पूरे हो गए। दो, तीन सप्ताहों में इराक पर कब्जा कर लेने की डींग मारने वाले बुश ने 1 मई 2003 को नाटकीय ढंग से घोषणा की थी कि यह युद्ध समाप्त हो गया। लेकिन इस घोषणा के बाद ही असली युद्ध, इराकी जनता का न्यायपूर्ण प्रतिरोधी युद्ध शुरू हुआ। इराकियों के इस महान प्रतिरोध में अब तक एक हजार से ज्यादा अमेरिकी सैनिकों की जानें गईं, जबकि कम से कम 6,000 सैनिक घायल हो गए। सिर्फ अप्रैल माह में ही 120 सैनिक कुत्ते की मौत मारे गए। एक दिन भी ऐसा नहीं बीत रहा है कि अमेरिकी फौजों को कोई नुकसान न हुआ हो। अबू ग़रेब जेल में इराकी कैदियों पर अमानवीय अत्याचार करके अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने यह गलतफहमी पाल रखी थी कि इस प्रकार वे इराकियों का मनोबल तोड़ सकेंगे। लेकिन इसके उलटे इराकी ज्यादा नफरत के साथ अपने हमलों को तेज कर रहे हैं। खासकर फलूजा और नजफ शहर अमेरिकी फौजों के कब्रगाह बन चुके हैं। इराकी संघर्षकारियों ने इन शहरों को लगभग अपने आधार इलाकों में तब्दील कर लिया। इसके बावजूद भी कि अमेरिकी सेना अंधाधुंध हमले करके सैकड़ों लोगों का कत्लेआम कर रही हो, इराकी हर मकान को एक मोर्चे में बदलकर लड़ रहे हैं। पहले पहल इराकियों को हथियार डालकर आत्मसमर्पण करने की धमकियां देने वाले अमेरिकी अब संघर्षविराम के समझौते के लिए हाथ-पैर मार रहे हैं। खासकर शियाओं के धर्म गुरू मुख्तदा अल सद्र को पकड़ने के लिए वे कई पापड़ बेल रहे हैं।

मार्च 2004 में किए गए एक सर्वेक्षण के मुताबिक 52 प्रतिशत अमेरिकी सैनिकों का मनोबल बुरी तरह गिर चुका है। आफगानिस्तान और इराक युद्धों के शुरू होने के बाद से अब तक अमरिका को 3,64,000 आरक्षित बलों और नेशनल गार्ड सैनिकों को सैन्य सेवाओं के लिए बुलाना पड़ा। फिलहाल इराक में डेढ़ लाख अमेरिकी सेनाओं और कई हजार अन्य देशों की सेनाओं की तैनाती करके, दुनिया को ठगकर संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रस्ताव करवाकर एक कठपुतली सरकार बिठाने के बावजूद अमेरिका की मुश्किलें घटने के आसार दूर-दूर तक नजर नहीं आ रहे हैं। दूसरी तरफ अमेरिका में बहुत जल्द होने वाले राष्ट्रपति चुनाव जीतने की बुश की आकांक्षा इस युद्ध के नतीजों के चलते उलटने की संभावना भी नजर आ रही है।

व्यापक स्तर का विद्रोह

अप्रैल की शुरूआत से प्रतिरोधी संघर्ष तीखा हो गया। उत्तर में किरकुक में अमेरिकी बलों ने इराकी प्रदर्शनकारियों को गोली मार दी तो उसके जवाब में विद्रोहियों ने पुलिस को गोली मार दी। दक्षिण के बस्रा में विद्रोहियों ने मुनिसिपल कार्यालयों पर कब्जा करके तेल के पाइप लाइनों को उड़ा दिया। इराक में हर तरफ विद्रोह व्यापक रूप से फैल गया। अप्रैल में बग्दाद के निकट एक एहेच-64 अपाचे फौजी हेलिकाप्टर को मार गिराया गया। बस्रा के तेल केन्द्र के निकट तालमेल के साथ किए गए आत्मघाती हमलों में तीन अमेरिकी नौसैनिक मारे गए।

कुत और कुफा शहरों पर पूरी तरह और नजफ पर आंशिक रूप से अल सद्र के नेतृत्व वाली मेहदी सेना का नियंत्रण कायम हो गया। शियाओं की इस विद्रोही सेना ने बग्दाद के सुदूर पूर्वोत्तर में स्थित बखूबा में अमेरिकियों के साथ संघर्ष किया। कई शहरों में पुलिस थानों पर हमले करके हथियार छीनकर जनता में बांट दिए।

अमेरिका की सैन्य कार्रवाइयों के उप निर्देशक जनरल किम्मिट ने मान लिया कि मार्च 2004 से औसतन रोजाना 28 हमले हो रहे हैं और अब विद्रोह नई बुलंदियों पर पहुंच चुका है। आमतौर पर आशावादी नजर आने वाला विदेश मंत्री जैक स्ट्रॉ को यह कबूल लेना पड़ा, "प्रेज़र कुकर से ढक्कन बाहर फेंका गया।" गौरतलब है कि स्ट्रॉ ने यह भी स्वीकार किया कि इस विद्रोह का नेतृत्व खुद इराकी कर रहे हैं न कि "विदेशी ताकतें।" 11 अप्रैल को बुश ने मान लिया कि दुराक्रमणकारियों के लिए एक "कठिन सप्ताह" गुजर गया।

समूचे इराक में विद्रोह उभार पर है। विद्रोहियों ने राजधानी बग्दाद के परिसर में एक अमेरिकी तेल काफिले पर घात लगाकर हमला करके उसे जला डाला। 10 अप्रैल को बग्दाद के एक पुलिस थाने पर हमला बोल दिया। बखूबा में विद्रोहियों और दुराक्रमणकारी सेनाओं के बीच तीखा संघर्ष हुआ। शिया विद्रोहियों ने दो दिन की लड़ाई के बाद कुत शहर पर कब्जा पा लिया जो कि इराक के मध्य में स्थित है। वहां तैनात उक्रेइनी सेनाओं को मार भगाकर उन्होंने यह उपलब्धी हासिल की। देश के व्यापक इलाके गठबन्धन सेनाओं के लिए असुरक्षित बन गए। छोटी पर हजारों कार्रवाइयां बिना रुके जारी हैं – निशाना साधकर मारना (स्नाइपिंग), बम हमले, रेड, सरकारी सम्पत्तियों पर कब्जा करना, इत्यादि। कर्बला में संघर्ष बिना रुके जारी है। खुद दुराक्रमणकारी सेनाओं के अधिकारी यह स्वीकार कर रहे हैं कि विद्रोह में भाग लेने वाले लोगों की संख्या आए दिन बढ़ती जा रही है।

बंधक प्रकरण

इराक में हाल के दिनों में विभिन्न देशों के सैनिकों व गैर-सैनिक लोगों को बंधक बनाना संघर्ष का एक व्यापक स्वरूप बन गया है। 17 अप्रैल को विद्रोहियों ने तीन जापानियों को बंधक बनाकर मांग की कि इराक से जापानी बल वापस जाएं। हालांकि जापान ने अपने अड़ियल रवैए से इस मांग को ठुकरा दिया, फिर भी इराकी छापामारों ने उन्हें सकुशल छोड़ दिया। यहां गौरतलब है कि रिहा होने वालों में से एक नोबुटका, जोकि मानवाधिकार कार्यकर्ता है, ने अदालत में मामला दर्ज किया कि इराक में उनकी जान के लिए जो खतरा पैदा हुआ था उसके लिए जापानी सरकार जिम्मेदार है। दूसरी बार विद्रोहियों ने दो जापानियों का अपहरण करके उनकी मांग पूरी न होने पर मार डाला। फिलिप्पीन्स के दो नागरिकों को बंधक बनाकर इराक से फिलिप्पीन्स

की सेनाओं की वापसी की मांग की। जनता के दबाव से फिलिप्पीन्स सरकार को यह मांग माननी पड़ी। सितम्बर के आखिरी सप्ताह में विद्रोहियों ने कुछ अमेरिकियों और ब्रितानियों को बंधक बनाकर इराकी जेलों में बंद महिला कैदियों की रिहाई की मांग की। इस बेहद जायज मांग को ठुकराकर अमेरिका और ब्रिटेन दोनों ही अपने नागरिकों की हत्या के जिम्मेदार बन गए। बंधक बनाकर विद्रोही वीडियो फिल्मों के जरिए बाहरी दुनिया को अपनी मांगों से अवगत करवा रहे हैं। टीवी, इंटरनेट इत्यादि इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का बेहतर उपयोग करते हुए विद्रोही साम्राज्यवादियों के इन औजारों को उन्हीं के खिलाफ पलटा रहे हैं। वे विभिन्न देशों के प्रति अलग-अलग और भेदभावपूर्ण रवैया अपनाते हुए बहुतेरे लोगों को छोड़ रहे हैं जबकि कुछ लोगों की हत्या कर रहे हैं। खासकर अमेरिकी नागरिकों की निर्मम हत्या कर रहे हैं। अमेरिकी सैनिकों को खाना पहुंचाने वाली ठेकेदारी कम्पनी में पेट पालने के लिए काम करने गए हुए नेपाली मजदूरों की हत्या जैसी कुछ अवांछित घटनाएं घटने के बावजूद आमतौर पर यह कहा जा सकता है कि इराकी विद्रोही अपने दावपेंचों पर सुचारू रूप से अमल कर रहे हैं। बंधकों की हत्या पर हाय-तौबा मचाने वाले लोग यह नहीं देख पा रहे हैं कि अबू ग़रेब जेल में इराकियों पर अमेरिकी सैनिकों द्वारा किए गए अमानवीय अत्याचारों और इस तरह की बेहिसाब यातनाओं के बदले में ही इराकी इस प्रकार जायज हिंसा करने को बाध्य हो गए हैं। इराक में अमेरिका और उसके सहयोगी देशों द्वारा लिया जा रहा हर फैसला और अमल की जा रही हर कार्रवाई नाजायज, अमानवीय और बर्बर हैं। जबकि इसके जवाब में इराकियों द्वारा की जा रही हर कार्रवाई – अपवादस्वरूप चंद घटनाओं को छोड़कर – जायज और समुचित है। बंधकों की सिर कलम करके हत्या करना, फलूजा के परिसर में कुछ अमेरीकी ठेकेदारों को बोटियों में काट कर पुल पर लटका देना इत्यादि घटनाएं पिछले कई सालों से अमेरिका द्वारा इराक पर किए जा रहे अमानवीय हमलों, अत्याचारों और कत्लेआमों के बदले में ही घट रही हैं।

दुराक्रमणकारी सेनाओं का गिरता मनोबल

जबसे इराक पर दुराक्रमण किया गया तबसे अमेरिकी सेनिकों का मनोबल लगातार गिरता जा रहा है। कहां, कब मौत होगी किसी को मालूम नहीं है। वे यह भी नहीं जानते कि वे किस लिए और किसके लिए लड़ रहे हैं। ऐसी अनिश्चित व असुरक्षित माहौल में किसी भी भाड़े की सेना की स्थिति ऐसी ही होगी। हालांकि बुरी तरह गिरते मनोबल को उबारने के लिए दुराक्रमणकारी सेनाओं के आला अफसर लगातार अपने बलों से मुलाकात कर रहे हैं, फिर भी इसका कोई नतीजा नहीं निकल पा रहा है। पेन्टगॉन ने खुद ही यह स्वीकार किया कि 72% फौजी इकाइयों का मनोबल काफी खराब है। इससे भी बदतर यह है कि अमेरिकी सैनिकों को अब अपने कमाण्डरों पर से विश्वास उठ चुका है। आत्महत्या की घटनाएं बढ़ी हैं। इसके पहले आत्महत्याओं की दर प्रति लाख 11.9 थी जो 2003 में 15.6 तक बढ़ गई। अब तक 30 से ज्यादा सैनिकों ने मानसिक तनाव के चलते आत्महत्या कर ली। ईस्टर त्यौहार के मौके पर इटली का राज्याध्यक्ष सिल्वियो बेरलुस्कोनी का दौरा भी गठबन्धन सेनाओं में आत्मविश्वास जगा नहीं सका। अबू ग़रेब जेल में हुए अत्याचारों के उजागर होने के बाद अमेरिकी रक्षा मंत्री ने गुप्त रूप से दौरा किया, फिर भी इससे स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया। खासतौर पर अप्रैल से प्रतिरोध में आई तेजी ने गठबन्धन सेनाओं के नाक में दम कर रख दिया। गठबन्धन सेनाओं के साथ-साथ अमेरिका द्वारा नियुक्त इराकी सुरक्षा बलों, पुलिस व अमेरिका के लिए चोरी-छिपे दलाल का काम कर रहे देशद्रोहियों को किसी भी इराकी विद्रोही नहीं बख्श रहे हैं। अमेरिका के लिए सिरदर्द का एक और विषय यह है कि जब इराकी विद्रोहियों के साथ इराकी सुरक्षा बलों की भिड़ंत होती है तो वे अपना हाथ उठाकर विद्रोहियों के पक्ष में जा मिल रहे हैं। इसलिए अमेरिका जिन इराकियों को भर्ती कर रहा है उन्हें भारी हथियारों के बजाए हल्के हथियार ही दे रहा है। इससे वे विद्रोहियों के हाथों आसानी से मात खा रहे हैं।

शुरू-शुरू में इराकी विद्रोह को कुछ भूतपूर्व बाथवादियों और सद्दाम के सहयोगियों द्वारा की जा रही छिटफुट कार्रवाइयां कहकर नकारने वाले अमेरिकी साम्राज्यवादियों को अब यह मानना पड़ रहा है कि यह दुराक्रमण के खिलाफ जनता द्वारा जारी एकजुट संघर्ष है। विभिन्न संगठनों की अगुवाई में जारी इराकी प्रतिरोधी संघर्ष को बदनाम करने के लिए अमेरिका अक्सर यह गलत प्रचार कर रहा है कि विदेशी उग्रवादी इराक में घुसकर हमले कर रहे हैं। लेकिन सचाई यह है कि खुद अमेरिका ही भाड़े के सुरक्षा बलों को ठेके पर लाकर खासकर सुरक्षा की जिम्मेदारी में नियुक्त कर रहा है। इसमें लातिनी अमेरिकी देशों और भारत समेत कई अन्य एशियाई देशों से निजी सुरक्षा संस्थाओं में भर्ती होकर काम करने वाले लोग हैं। इस प्रकार, अमेरिका अपने सैन्य नुकसानों को टालने के लिए युद्ध का भी निजीकरण कर रहा है। फिलिस्तीनी जनता के विद्रोह को क्रूरता से कुचलने में काफी अनुभव प्राप्त इज्राएली सैन्य अधिकारी अमेरिकी बलों को विद्रोह-विरोधी दावपेंचों में प्रशिक्षण दे रहे हैं। इतना ही नहीं, इज्राएली खुफिया अधिकारी कुर्द कमांडों को गुप्त रूप से प्रशिक्षण दे रहे हैं ताकि इराकी प्रतिरोध का नेतृत्व व मार्गदर्शन कर रहे नेताओं का सफाया करवाया जा सके।

इराकियों के प्रतिरोध से अमेरिकी मरीनों के हौसले

नजफ में मोर्टार दागते मेहदी सेना के लड़ाकू

सिर न झुकाता फलूजा

शुरू से ही फलूजा शहर इराकी विद्रोहियों का मुख्य गढ़ रहा है। पिछले अप्रैल माह में अमेरिकी बलों ने इस शहर के निवासियों का कत्लेआम किया था। दुराक्रमण, अंधाधुंध गिरफ्तारियां, हत्याएं, यातनाएं, आदि के खिलाफ भड़के गुस्से और नफरत की आग को यहां की जनता के संघर्षों में प्रतिबिम्बित होता हुआ देखा जा सकता है। ब्लैकवाटर सेक्यूरिटी कन्सल्टिंग नामक कम्पनी की तरफ से काम कर रहे चार ठेकेदारों को 31 मार्च को विद्रोहियों ने एक ऐम्बुश में मार गिराया। पेन्टागॉन की ओर से काम करने वाली यह कम्पनी अमेरिकी बलों को खाना सप्लाई करने वाले काफिलों को सुरक्षा मुहैया करवाती है। ये लोग जब एक अमेरिकी बेस से बाहर आकर शहर में घुसे तो इराकी योद्धाओं ने ग्रेनेडों से इन पर हमला करके मार डाला। उसके बाद शहर की जनता उनके कारों पर टूट पड़ी। उनकी लाशों को जनता ने घसीटते हुए ले जाकर बोटियों में काट डाला और खंबों से लटकाकर अमेरिकी साम्राज्यवाद के प्रति अपनी तीखी नफरत का इज़हार किया। उसी दिन फलूजा से 15 किलोमीटर दूर स्थित हब्बानिया सड़क के किनारे लगाए एक बम फटने से पांच अमेरिकी सैनिक कुत्तों की तरह मारे गए थे।

इन कार्रवाइयों का बदला लेने के इरादे से 4 अप्रैल को 1,300 अमेरिकी मरीन सैनिक इस क्षेत्र में उतारे गए। विद्रोह का गढ़ बन चुके फलूजा पर नियंत्रण पाने के लिए भेजी गई तीसरी अमेरीकी सैन्य टुकड़ी थी वह। उन्होंने फलूजा की घेराबन्दी करके कर्फ्यू लागू कर घरों पर लगातार छापेमारियां ओर गिरफ्तारियां शुरू कीं। इसके बावजूद दो दिन बाद भी वे सिर्फ शहर के एक चौथाई के आधे हिस्से पर ही कब्जा जमा सके। एक पखवाड़े तक संघर्ष जारी रहा। मरीनों ने हेलिकाप्टरों और युद्ध विमानों के जरिए घरों के कतारों पर अंधाधुंध गोलीबारी व गोलाबारी की। एक मस्जिद पर एफ-16 विमानों के हमले में 40 लोगों की जानें गईं। पूरे शहर को कब्जे में लेने की सैनिकों ने जी-तोड़ कोशिश की। घण्टों तक चली आमने-सामने की लड़ाइयों में 50 अमेरिकी मरीन सैनिक मारे गए। उनकी मदद में भेजे गए इराकी पुलिस बल 'लापता' होकर विद्रोहियों के पक्ष में शामिल हो गए। 12 अप्रैल को स्थानीय इराकियों से गठित 12वीं बटालियन के 620 सैनिकों को फलूजा भेजा गया था। जब वे एक शिया बहुल बस्ती से गुजर रहे थे तो उन पर गोलियां बरसाई गईं जिससे वे भागकर उत्तर इराक के ताजि में मौजूद अपने बटालियन के बेस में लौट गए।

इस पूरे संघर्ष में अमेरिकी बलों ने 600 लोगों की हत्या करके 1,250 लोगों को घायल कर दिया। इनमें ज्यादातर महिलाएं और बच्चे ही थे। इराक पर दुराक्रमण के बाद किए गए घोरतम कत्लेआमों में यह एक था। अब फलूजा दुराक्रमणकारी सेनाओं के खिलाफ धारदार जन प्रतिरोध का संकेत बन गया। अमेरिका की क्रूरतापूर्ण कत्लेआम की नीति की हर तरफ जमकर निंदा की गई।

चार निजी सैनिकों की मौत के बाद घमण्डी पाल ब्रेमर ने इसका बदला लेने की बात की। इसका अर्थ है वे और ज्यादा कत्लेआम कर सकते हैं। लेकिन बाद में उसे अपमान का घूंट पीकर संघर्ष विराम करके अमेरिकी मरीनों को फलूजा से पीछे हटाकर ग्रामीण इलाकों में भेजना पड़ा। इस प्रकार फलूजा में छेड़ा गया 'ऑपरेशन फौलादी संकल्प' अमेरिकी मरीनों के महान पीछे कदम के रूप में समाप्त हुआ। फलूजा संघर्ष ने इराक को बेहद प्रभावित किया। उसने शिया और सुन्नी लोगों के बीच अभूतपूर्व स्तर पर जबर्दस्त एकता को उभारा। दुराक्रमणकारियों के भड़काने के बावजूद इन दो समुदायों के बीच एकता विकसित होना काफी महत्वपूर्ण पहलू है। बग्दाद में हुई एक लड़ाई में शिया और सुन्नी विद्रोहियों ने मिलकर भाग लिया जिसमें तीन अमेरिकी सैनिक मारे गए। लगभग एक हजार शिया लोगों ने कई कारों में सवार होकर अपने साथ खाना और दवाएं लेकर फलूजा में मार्च किया। "सुन्नी-शिया का भेदभाव हम नहीं करेंगे... इस्लामिक एकता जिन्दाबाद... हम शिया-सुन्नी भाई-भाई हैं... अपने देश को कभी नहीं बेचेंगे" आदि लोगों के लगाए नारे रणानाद बनकर गूंज उठे। फलूजा में रहने वाले एक पत्रकार अब्दुल रजाक अल जोरबी ने कहा, "हर गली में संघर्ष छिड़ गया। गलियों में हर आदमी रॉकेट प्रेफेल्ड ग्रेनेड, कलाश्निकोव रायफल, मशीनगन, आदि किसी न किसी हथियार से लैस था। हर इन्सान एक योद्धा बन गया।" इस संघर्ष ने इराकियों के प्रतिरोध को बेहद स्फूर्ति प्रदान की।

दक्षिण व मध्य इराक के शिया इलाकों में संघर्ष का दूसरा मोर्चा

फलूजा को कुल समस्या का आधा हिस्सा ही कहा जा सकता है। जब ठीक "ऑपरेशन फौलादी संकल्प" शुरू हो रहा था तभी दूसरे जंगे मैदान में लड़ाई का बिगुल बज गया। शियाओं का युवा धर्म गुरू 30 वर्षीय मुख्तदा अल सद्र अब इस बहादुराना प्रतिरोधी संघर्ष के आदर्श नेता के रूप में सामने आए। चार साल पहले सद्दाम के हाथों मारे गए एक लोकप्रिय धर्म गुरू का बेटा ही अल सद्र हैं। पिछले साल

उन्होंने मेहदी सेना के नाम से एक मिलिशिया का निर्माण किया जिसमें उन्होंने हजारों लोगों को भर्ती किया। इराकी प्रशासनिक परिषद के अध्यक्ष रहे पाल ब्रेमर ने अल सद्र के निकट सहयोगी को गिरफ्तार करके उनके तेजतर्रार अखबार को बन्द करवा दिया। अमेरिका के अनुकूल रहने वाले एक उदारपंथी शिया धर्म गुरू की पिछले साल हुई हत्या के मामले में अल सद्र को दोषी करार देते हुए ब्रेमर ने उनकी गिरफ्तारी का आदेश दिया। इससे अल सद्र सड़कों पर आकर अपने साथियों को अमेरिका के खिलाफ 'जेहाद' छेड़ने का आह्वान दिया। बग्दाद के सद्र सिटी में अमेरिकी बलों के साथ संघर्ष शुरू हुआ। दक्षिण व मध्य इराक के कई शहरों को मेहदी सेना ने मुक्त करके अपने कब्जे में लिया। अब वह अपने सैकड़ों योद्धाओं की सुरक्षा में हैं। अगस्त के दूसरे सप्ताह से एक माह तक अमेरिका ने नजफ में भयानक हमले किए। कथित तौर पर अल सद्र द्वारा शरण लिए हुए इमाम अली दर्गाह को मुक्त कराने के बहाने अमेरिका ने बर्बरतापूर्ण हमले किए जिसमें सैकड़ों बेकसूर लोग मारे गए। सद्र को मारने, उनकी सेना को निहत्था बनाने और नजफ पर कब्जा करने की अमेरिका की लाख कोशिशों के बावजूद उसे कामयाबी नहीं मिली। वह निडरता के साथ मांग कर रहे हैं कि अमेरिकी सेनाएं वापस जाएं। उन्हें अंतरिम सरकार में जगह देने की पेशकश करके प्रलोभन में फंसाने के लिए अमेरिका द्वारा की गई सारी कोशिशें अब तक नाकाम ही रहीं। "जंगी विमानों की आवाज से खौफ न खाएं, निडरता से खड़े रहें" कहकर वे संदेश दे रहे हैं जिससे लोग काफी प्रभावित हो रहे हैं। नजफ और कुफा शहरों में अमेरिका ने वीभत्सपूर्ण हमले किए। इसके बवजूद इन्हें अपने कब्जे में लेने में वह बुरी तरह नाकाम हुआ। अमेरिका ने नजफ में विमानों से बम बरसाकर सैकड़ों योद्धाओं का कत्ल किया। कुफा में 67 मिलिशिया योद्धाओं को गोली मार दी। इनके अलावा कई अन्य बेकसूर लोगों की जानें लीं। फिर भी अभी तक नजफ पर अमेरिका की पकड़ नहीं बन पाई। अल सद्र के नेतृत्व में मेहदी सेनाओं ने मुख्य रूप से दक्षिणी इराक में शानदार विद्रोह चलाया। बुल्गारिया, पोलैण्ड, स्पेइन, उक्रेइन और अमेरिका की भाड़े की फौजों को मुंहतोड़ जवाब दिया।

अन्तहीन संकट में अमेरिका

इराक पर हुए हमले को एक साल पूरा होने के उपलक्ष्य में शियाओं और सुन्नियों ने एकजुटता के साथ प्रतिरोध में तेजी लाई। एक ओर अमेरिका पर दबाव बढ़ने लगा। उसके सारे अनुमान उलट जाने से उसका खर्च बेहिसाब बढ़ गया। अब तक इस युद्ध पर अमेरिका ने 151.1 अरब डॉलर से ज्यादा खर्च किया। अमेरिकी जनता पर अंधाधुंध कर लगाकर और सामाजिक कल्याण के खर्च में भारी कटौतियां करके अमेरिका सरकार यह राशि जुटा रही है। इससे अमेरिकी जनता में विरोध बढ़ रहा है। इराक का तेल लूटकर मुनाफा कमाने की आशाएं फिलहाल तो पूरी न हो पा रही हैं, जो इस युद्ध के लक्ष्यों में एक है। अमेरिका द्वारा थोपे गए सारे प्रतिबन्धों को सहकर भी सद्दाम जितना तेल निकालता था उतना भी अमेरिका निकाल नहीं पा रहा है। पाइप लाइनों पर निरन्तर हो रहे हमलों ने इस कोशिश को सीमित कर रखा है। इराक के पास मानव विनाशक हथियार होने और अल कायदा के साथ उसके सम्बन्ध होने के जो बहाने अमेरिका ने बताए वे सब जनता में सफेद झूठ साबित हो चुके हैं। इससे दुनिया की जनता में, खास कर अमेरिकी और ब्रितानी जनता में बेहद असंतोष बढ़ गया। बुश और ब्लेइर को अपने-अपने देशों में और दुनिया के दूसरे देशों के दौरों के मौके पर लाखों लाख लोगों के विरोध प्रदर्शन झेलने पड़ रहे हैं। स्पेइन में हुए चुनावों में अज़नार के नेतृत्व वाली दक्षिणपंथी पार्टी पराजित हुई। सत्तारूढ़ हुई नई पार्टी ने अपने चुनावी वादे को अमली जामा पहनाते हुए इराक से अपनी सेनाओं को वापस बुलाया। फिलिप्पीन्स समेत कुछ अन्य देशों की सरकारों ने भी अपने-अपने देशों में संभावित राजनीतिक संकट को टालने के लिए अपनी फौजों को इराक से बुला लिया। सर्वेक्षणों के मुताबिक अगले कुछ महीनों में अमेरिका और ब्रिटेन में होने वाले चुनावों में बुश और ब्लेइर की पराजय निश्चित है। इससे इस संकट को किसी भी तरह टालकर अपनी चुनावी सम्भावनाओं को बेहतर बनाने की मंशा से बुश-ब्लेइर जोड़ी एड़ी-चोटी का जोर लगा रही है। इराक युद्ध में बुरी तरह डूब चुके अमेरिका के अपने सैन्य नुकसानों और खर्च से बचने के सारे प्रयास आंशिक तौर पर ही सफल रहे। जबकि 20 हजार सैनिकों की बदली करना था तो इस संख्या को भर्ती करने के लिए उसे कई पापड़ बेलने पड़े। कम संख्या में ही सही अमेरिकी सैनिकों के भागने की घटनाएं शुरू हुईं। पेन्टगॉन पर सैन्य बलों के लिए बढ़ रहे दबाव के चलते घायल सैनिकों को पर्याप्त आराम दिए बिना ही थोड़ा ठीक होने के बाद युद्ध में भेजा जा रहा है, इसके बावजूद कि डॉक्टर ऐसा करने से मना कर रहे हैं। दूसरी ओर अमेरिकी सैनिकों के परिवार सदस्यों से यह मांग लगातार उठ रही है कि उनके बच्चों को वापस लाया जाए। कुल मिलाकर इराक पर बुश की नीतियों के प्रति तीखा विरोध हो रहा है। इससे पिछले अगस्त माह में बुश ने यूरोप और एशियाई देशों में मौजूद सैनिकों में से 70 हजार सैनिकों को वापस लाने की घोषणा करके अमेरिकी मतदाताओं को संतुष्ट करने की कोशिश की। शीत युद्ध के बाद से इस प्रकार का फैसला अमेरिका ने पहली बार लिया है।

अबू ग़रेब जेल में हुए अत्याचारों और इराक के पास व्यापक विनाश के हथियार होने के झूठे आरोपों से इराकी प्रशासनिक परिषद की घनघोर बदनामी हुई है। किसी भी तरह एक कठपुतली सरकार की स्थापना किए बिना युद्ध का बोझ संयुक्त राष्ट्र संघ पर थोपना संभव नहीं होगा, यह सोचकर अमेरिका कठपुतली सरकार की स्थापना के लिए उतावला हो गया। लेकिन खुद उसका पालतू कुत्ता अहमद चलाबी "पूर्ण प्रभुसत्ता" की मांग पर अड़ गया तो अमेरिका को उसे कठपुतली सरकार के मुखिया बनाने के प्रस्ताव को वापस लेना पड़ा। कल तक अमेरिका का तलवे चाटने वाला चलाबी एक ही झटके में अमेरिका का घोर दुश्मन बन गया। इससे उसने सीआईए का मुखबिर और अमेरिका का एक और वफादार कुत्ता इयाद अलावी को कठपुतली सरकार का मुखिया बनाने का फैसला लिया। संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रस्ताव के बिना ही इराक पर हमला करने वाले घमण्डी अमेरिका को कठपुतली सरकार बिठाने के लिए उसका प्रस्ताव जरूरी हो गया। लेकिन उसे अपने प्रस्ताव को पारित करवाने के लिए काफी मशक्कत करनी पड़ी। पांच बार अपने मसौदे में फेर-बदल करने पड़े।

आनन-फानन में बनी कठपुतली सरकार

वफादार दलाल चलाबी के साथ रिश्ता टूटने के बाद इयाद अलावी के नेतृत्व में अन्तरिम सरकार के नाम से एक कठपुतली सरकार की स्थापना करने का फैसला लिया गया। याद रहे, ठीक इसी तरीके से अफगानिस्तान में हामिद करजई के नेतृत्व में एक कठपुतली सरकार का गठन किया गया था। इराक के दुधमुंहे बच्चे भी यह जानते हैं कि अलावी सीआईए का कट्टर मुखबिर और बदनाम हत्यारा है। इसके अलावा कठपुतली सरकार में जिन-जिन लोगों को नियुक्त किया गया वे सब इसी प्रकार के बदनाम दलाल और हत्यारे हैं। दूसरी ओर इस सत्ता परिवर्तन को झूठा करार देते हुए इराकी विद्रोहियों ने अपने प्रतिरोधी संघर्ष में जून के आखिरी सप्ताह के आते-आते काफी तेजी और तीव्रता लाईं। सुरक्षा परिषद के स्थाई सदस्य फ्रांस, जर्मनी और रूस के द्वारा उठाई गई आपत्तियों के चलते पांच बार बदले गए प्रस्ताव को अमेरिका और ब्रिटेन ने पेश किया तो सुरक्षा परिषद ने पारित किया। इस प्रस्ताव के मुताबिक इराक को अमेरिका की देखरेख में पूर्ण "प्रभुसत्ता" दी जाएगी। शियाओं के धार्मिक नेता मुख्तदा अल सद्र ने इसका कड़ा विरोध किया। सुन्नी बहुल "इस्लामिक फ्रन्ट फॅर इराकी रेसिस्टेन्स" नामक संगठन ने अलावी के नेतृत्व वाली सरकार को "नकाबपोश दुराक्रमण" करार दिया।

30 जून को इराकी प्रशासनिक परिषद से पाल ब्रेमर के हाथों से इयाद अलावी को सत्ता सौम्पा जाना था। इस भव्य समारोह में "मुक्ति दाता" जार्ज बुश को भी आमंत्रित करना तय हुआ था। लेकिन इराकियों के प्रतिरोध से डरकर घोषित तारीख को चुपचाप तीन दिन पीछे बदलकर सत्ता परिवर्तन की रस्म चोरी-छुपे पूरी करा दी गई। पाल ब्रेमर की जगह अमेरिकी राजदूत के ओहदे से जॉन नीग्रोपोन्ट ने ली। "उग्रवाद-विरोधी कार्रवाइयों" के विशेषज्ञ के तौर पर इराक में कदम रखने वाले पाल ब्रेमर को आखिरकार बिना किसी को सूचित किए मुंह छुपाकर इराक से लौटना पड़ा। जब साफ तौर पर पूरा देश ही अमेरिकी दुराक्रमण और कठपुतली सरकार के खिलाफ खड़ा हो गया हो, तब इसके अलावा चारा भी क्या होगा? इराक में अमेरिका ने 3,000 कर्मचारियों के साथ एक विशालकाय दूतावास बनाया जैसा कि दुनिया में कहीं भी नहीं है। अब यह कार्यालय ही कठपुतली सरकार को नियंत्रित करेगा। लगभग डेढ़ लाख सेना के सहारे वह जनता के गुस्से के शोलों से कठपुतली सरकार को बचाने की कोशिश करता रहेगा। संयुक्त राष्ट्र संघ सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव के मुताबिक सात माह के भीतर इराक में चुनाव सम्पन्न कराना होगा। लेकिन अब तक मिल रही खबरों के मुताबिक चुनावों के मौके पर इराक में व्यापक पैमाने पर प्रतिरोधी संघर्ष भड़क सकता है। देश के व्यापक इलाकों में चुनाव नहीं भी हो सकते हैं। लेकिन अमेरिका किसी भी तरह इस रस्म को पूरा कर सकता है ताकि बाहरी दुनिया को धोखा दिया जा सके, जैसा कि हमारे देश में कश्मीर में होता है। इराक में जब तक अमेरीकी फौजें तैनात रहेंगी तब तक चाहे सरकार में कोई भी रहे पर वह स्वतंत्रता नहीं कहलाएगी। उसे कोई प्रभुसत्ता नहीं होगी। यह बात संघर्षशील इराकी जनता अच्छी तरह जानती है।

प्रतिरोध बिना रुके जारी

अमेरिका ने आशा की थी कि इराक में उसकी सेनाओं का स्वागत मुक्ति दाताओं के रूप में किया जाएगा। उसका भरोसा था कि बाथ सरकार के अधिकारियों और सद्दाम की गिरफ्तारी के बाद इराक उसके नियंत्रण में आ जाएगा। अब अमेरिका का यह कहना बिलकुल झूठ है कि उसने इराक को प्रभुसत्ता दी है। इस प्रश्न का अभी भी संतोषजनक व स्पष्ट उत्तर नहीं दिया जा रहा है कि अमेरिकी सैन्य बल इराक में कब तक रहेंगे। इराकी जनता इस झूठी आजादी को मान्यता देने को कतई तैयार नहीं है। इराकी ऐलान कर रहे हैं कि जब तक उनकी धरती से विदेशी सेनाएं वापस नहीं जाएंगी तब तक प्रतिरोध जारी रहेगा। अमेरिकी सेनाओं की देखरेख में कठपुतली सरकार द्वारा की जा रही चुनाव की तैयारियों का वे ढोंग करार देकर मजाक उड़ा रहे हैं। इराकी जनता के प्रतिरोध-संघर्ष ने यह ऐतिहासिक सचाई फिर एक बार साबित की कि अपेक्षापूर्ण कमजोर ताकत भी शक्तिशाली ताकत से टक्कर ले सकती है और उसके नाक में दम कर सकती है। 19वीं सदी के शुरूआती दिनों में हैती में सफल हुई गुलामों की बगावत से लेकर माओ त्से-तुङ के नेतृत्व में सम्पन्न चीनी क्रान्ति तक, एक हद तक 1950 और 1960 के दशकों में हुए उपनिवेशवाद-विरोधी युद्धों में भी, फिलहाल नेपाल में जबर्दस्त ढंग से जारी जनयुद्ध में इतिहास ने यह बारम्बार साबित किया है कि एक न्यायपूर्ण लक्ष्य के साथ जनता पर निर्भर करते हुए लड़ने वाली छापामार शक्तियां संघर्ष के दौरान एक सेना के रूप में उभरेंगी और शुरू में अपने से गई गुना शक्तिशाली रहे दुश्मन को हरा सकेंगी।

लेकिन इराकी छापामार शक्तियों में ऐसे नेतृत्व, जोकि रणनीतिक लक्ष्यों का सूत्रीकरण कर जनता को एकजुट करने की क्षमता रखता हो, और समुचित सैन्य रणनीति-कार्यनीति का अभाव है। इसका मतलब एक सही लाइन अपना सकने वाली एक नेतृत्वकारी संस्था, यानी एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी-माओवादी अगुवा दस्ता इराक में नहीं है। सिर्फ वही उस देश की, तमाम मध्य-पूर्व इलाके की तथा समूची दुनिया की जनता के हितों की वास्तविक रूप से अभिव्यक्ति कर सकती है। आखिरकार वही शक्ति संतुलन को बदल सकेगी। पर यह सच है कि इराकी जनता के महान प्रतिरोधी संघर्ष ने "नई अमेरिकी सदी परियोजना" को यकीनन जोरदार धक्का लगाया। दूसरी तरफ अफगानिस्तान भी खुद को यह साबित कर रहा है कि वह अमेरिका द्वारा थोपे गए "विशाल मध्य-पूर्व" ढांचे में नहीं फंसा है। अफगान में अमेरिकी बलों पर हमले तेज हो रहे हैं। और इधर नेपाल, भारत, फिलिप्पीन्स, पेरू, तुर्की, आदि देशों में माओवादियों के नेतृत्व में जनयुद्ध अमेरिकी साम्राज्यवादियों की साजिशों को नाकाम बनाते हुए आगे बढ़ रहे हैं। साम्राज्यवाद के खिलाफ उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं और जनता का अन्तरविरोध तीखा हो रहा है। इन संघर्षों का नतीजा ही है कि दुनिया की जनता का नम्बर एक दुश्मन अमेरिका एक साथ कई दिशाओं में अपनी ताकत केन्द्रित न कर पाने की मजबूर स्थिति में पहुंच गया है। निश्चय ही इसमें इराकी जनता के प्रतिरोधी संघर्ष का महत्वपूर्ण योगदान है। उनकी कामयाबियां दुनिया की तमाम जनता की कामयाबियां हैं। ✶

अक्टूबर 2004

अबू ग़रेब जेल में इराकी कैदियों पर अमेरिकी सैनिकों के अमानवीय अत्याचार

इराक को स्वतंत्रता दिलाने के बहाने उस पर हमला करने वाले अमेरिका का बेहद घिनौना चेहरा अब सामने आ गया। उसका अमानवीय चरित्र दुनिया की जनता की नजरों के सामने तस्वीरों समेत उजागर हुआ है। अबू ग़रेब जेल में इराकी नागरिकों पर अमेरिकी सैनिकों द्वारा किए गए पाशविक अत्याचारों के दृश्यों को देखकर विश्व जनता स्तब्ध रह गई। बेसहारा कैदियों के प्रति अमेरिका द्वारा अमल 'जनवाद' अब नंगा हो गया। चूंकि इन्हें इनकार करना मुमकिन नहीं है, इसलिए अमेरिकी सैन्य व प्रशासनिक अधिकारी माफी मांग रहे हैं। गिद्ध से भी बदतर रम्सफेल्ड को अपमान का घूंट पीते हुए यह मानने पर मजबूर होना पड़ा कि सैनिकों की ये कार्रवाइयां पाशविक, बर्बर और अमानवीय हैं।

लेकिन, हकीकत यह है कि जनवरी के आखिर से ही इन तस्वीरों के बारे में अमेरिकी रक्षा विभाग को साफ तौर पर जानकारी थी। हालांकि उसने इसकी अंदरूनी जांच का आदेश दिया, पर उसकी मंशा यही थी कि तथ्यों को सेना दफ्तर की चारदीवारी के बीच ही दफना दिया जाए। लेकिन अमेरिका के कुछ टीवी चैनल और अखबार इन तस्वीरों को हासिल करने में कामयाब हो गए। उसके बाद रम्सफेल्ड और उसके अनुयायियों ने यह अपील करते हुए इन तस्वीरों के प्रसारण को टालने की पुरजोर कोशिश की कि इससे इराक में मौजूद अमेरिकी फौजों को खतरा हो सकता है। सीबीएस टीवी चैनल ने पहले तो रम्सफेल्ड की बातें मान लीं पर उन्हें तब प्रसारित किया जब उसे यह मालूम हुआ था कि वे तस्वीरें दूसरों के हाथ में भी आ गईं।

सशस्त्र बलों के अत्याचारों के सम्बन्ध में जनता को स्पष्ट और न ठुकरा सकने वाले सबूत मिलने का यह बेहद दुर्लभ मौका था। जनवादी परम्पराओं के बारे में बढ़ा-चढ़ाकर डींग हांकने वाला अमेरिका दुनिया भर में मानवाधिकारों का हिमायती होने का दिखावा करता है। अमेरिकी विदेश मंत्रालय उसके अनुकूल न रहने वाले देशों में होने वाले मानवाधिकारों के उल्लंघन के बारे में हर साल रिपोर्टें प्रकाशित करवाता है। अब इन तस्वीरों के बाहर आने के बाद विश्व मानवाधिकार रिपोर्ट के वार्षिक प्रकाशन को "तकनीकी कारणों" से स्थगित कर दिया जो कि मई में होना चाहिए था। अगर ये तस्वीरें उजागर नहीं होतीं तो उस रिपोर्ट में वह अपने रिकार्ड को बेहतर बताते हुए अपना पीठ जरूर ठोंक लेता।

रम्सफेल्ड को यह साफ तौर पर मालूम है कि हकीकत को दबाना सम्भव नहीं है। यही वजह है कि उसने अमेरिकी संसद सदनों में जुबानी गवाह देते हुए कहा कि "इससे भी दिल दहला देने वाली तस्वीरें मौजूद हैं।" सेनेट और प्रतिनिधि सभा के चुनींदा सदस्यों को लगभग 1,600 तस्वीरें दिखाई गईं। इन बेहद बर्बरतापूर्ण दृश्यों को देखकर कई लोग हक्का-बक्का रह गए। वे यह देखकर भौचक हो गए कि उनकी 'उन्नत मूल्यों वाली सभ्यता' इस दुनिया को 'सभ्यता के दुश्मनों से बचाने' की किस प्रकार कोशिशें कर रही है।

गॉर्डियन अखबार ने लिखा है कि अमेरिकी और ब्रितानी सैन्य बलों को सिखाए जाने वाले तरीकों से जेल में किए गए अमानवीय यौन अत्याचार मेल खाते हैं। दरअसल अमेरिकी सेना किस प्रकार कैदियों के प्रति अपमानजनक बरताव कर रही है और नियमों का उल्लंघन कर रही है, इसकी रिपोर्ट 16 माह पहले ही उजागर हुई थी। उस रिपोर्ट में सबूत के साथ जिक्र किया गया था कि काबुल के परिसर में स्थित बग़राम वायुसेना अड्डे में तथा डिगो गार्शिया में अमेरिकी खुफिया अधिकारी संदिग्ध व्यक्तियों को यातनाएं दे रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय मीडिया ने इस रिपोर्ट को ज्यादा अहमियत नहीं दी। अमेरिकी कांग्रेस ने इसका नजरअन्दाज किया। अमेरिकी सरकार ने इसे ठुकरा दिया।

नुकसान नियंत्रण

चूंकि अमेरिकी रक्षा विभाग को पहले ही मालूम था कि किसी न किसी दिन ये अपमानजनक कार्रवाइयां उजागर होकर रहेंगी, इसलिए वह नुकसानों के नियंत्रण के लिए तैयार हो चुका था। उसने बिना किसी टाल-मटोल के अत्याचारों को कबूल किया। उसके बाद मेजर जनरल आन्टोनियो तगुबा द्वारा पेश गोपनीय रिपोर्ट अखबारों को लीक हुई। इसीलिए रम्सफेल्ड ने कबूल किया कि इससे भी घिनौनी तस्वीरें मौजूद हैं। बुश, रम्सफेल्ड और ब्लेइर ने इसमें अपनी भूमिका से इनकार करते हुए सारा दोष निचले स्तर के अधिकारियों और सैनिकों के सिर मढ़कर "गहरी" क्षमा याचना की। रम्सफेल्ड ने इसे "गैर-अमेरिकी और मति-भ्रमित" कार्रवाई की संज्ञा दी।

इस "मति-भ्रमित" सिद्धान्त को नकारने वाले कई और तथ्य भी रोशनी में आए। रक्षा विभाग के अधिकारियों ने स्वीकार किया कि अमेरिकी हिरासत में 37 इराकी और अफगान कैदियों की मौत हुई है। ये सब दिसम्बर 2002 के बाद ही हुईं। इस प्रकार के 35 मामलों की जांच करने पर पता चला कि इनमें से 10 मामले ऐसे थे जो बलात्कार, हमला, घायल करने, आदि से जुड़े हुए थे। ग्वान्टेनामो की खाड़ी की कैदियों के सम्बन्ध में तो किसी को कोई जानकारी नहीं है। राष्ट्रीय सुरक्षा की आड़ में कैदियों के सम्बन्ध में सारी जानकारी गुप्त रखी गई है। कैदियों के हालात के बारे में जानना तो और भी मुश्किल है। उन्हें अपनी सुरक्षा करने की कोई कानूनी प्रक्रिया उपलब्ध नहीं है। जेनीवा समझौता भी उन पर लागू नहीं होता!

इराकी कैदियों पर किए गए यौन दुराचार, जैसा कि मेजर जनरल

एक कैदी पर कुत्ते को उकसाता अमेरिकी सैनिक

नंगा खड़ा करके हिंसाचार का दृश्य

ए. मार्क्स ने बताया, "बुरे काम करने वाले चंद बदमाश सैनिकों" द्वारा ईजाद नहीं किए गए। सेना के प्रश्नकर्ताओं को प्रशिक्षण देने वाले इस अधिकारी ने कहा कि वे ऐसे तरीके कतई नहीं सिखा रहे हैं। लेकिन सचाई इसके ठीक उलटी है और वह यह है कि यौन सम्बन्धी अपमान विशेष बलों द्वारा प्रयुक्त तरीकों का हिस्सा है। अब ये तरीके सामान्य बलों और निजी प्रश्नकर्ताओं के लिए भी लागू करवा रहे हैं। इस तकनीक को आर2आई (रेसिस्टेन्ट टु इंटरागेशन) के नाम से बुलाया जा रहा है। इराक से वापस आए एक भूतपूर्व ब्रितानी विशेष बल अधिकारी ने कहा कि यह तरीका अमेरिका और समूचे यूरोप में सिखाया जा रहा है ताकि "पकड़े जाने के बाद लगने वाले झटके की स्थिति को लगातार जारी रखा जा सके।' "सभ्यता" के सर्वोच्च मूल्य इस प्रकार नंगे हो रहे हैं!!

यह उजागर होने के बाद कुछ कैदियों को रिहा कर दिया गया, इसलिए अब ज्यादा सबूत मिल रहे हैं जो तस्वीरों से भी बढ़कर हैं।

कैदियों की गवाही

मेजर जनरल तगुबा द्वारा जुटाई गई गवाहियां रक्षा विभाग द्वारा की गई अंदरूनी जांच का हिस्सा थीं। इन गवाहियों को जनवरी 2004 में जुटाया गया। हालांकि इस जांच रिपोर्ट को गुप्त रखा गया था, लेकिन बाद में वह लीक हो गई।

इसमें जिन यातनाओं का जिक्र किया गया वे बाहर आने वाली तस्वीरों से भी बदतर थीं। कैदियों ने अपने बयानों में कहा – अमेरिकी अधिकारी उन पर बैठकर जानवरों की तरह सवारी करते थे; महिला सैनिक कैदियों को यौन सम्बन्धी अपमानों का शिकार बनाती थीं; पखाने में खाना फेंककर उसे उठाकर खाने को मजबूर करते थे; जननेंद्रियों को बिजली के झटके देते थे; सुअर का मांस और शराब का सेवन करने पर मजबूर करके इस्लाम को छोड़ने को जबरन कबूलवाते थे; बेदम पिटाई करते थे; इत्यादि कई घनघोर हिंसात्मक व घृणास्पद तरीकों के बारे में बताया। एक बाप को उसके बेटे के साथ नंगा बनाकर मुरगियों की भांति एक बक्से के अन्दर रख दिया गया। कई कैदियों को नंगा बनाकर उन्हें एक के ऊपर एक को गिराकर उन्हें समलिंग संपर्क करने पर मजबूर किया। उनके जननांगों पर रायफलों की कुंदों से मारा जाता था। उनके शरीर पर अमेरिकी अधिकारी पेशाब करते थे। कई अन्य बर्बरतापूर्ण यातनाओं के बारे में भी कैदियों ने बताया जिनकी आम लोग कल्पना भी नहीं कर सकते। 372वीं मिलटरी पुलिस कम्पनी का सदस्य चार्लेस गारनेर और एक महिला अधिकारी ब्रिगेडियर जनरल जेनिस कार्पिनस्की दोनों अबू ग़रेब जेल में क्रूरता का पर्याय बन गए। विद्रोह को कुचलने के लिए बनाए गए इस प्रकार के जेल इराक में कुल 16 हैं। इन अत्याचारों के बारे में खबरें बाहर आने के बाद 240 कैदियों को रिहा कर दिया गया। अभी 7,000 कैदी जेलों में हैं। इसके अलावा कई अन्य अनधीकृत सेल (कोठरियां) भी हैं। अमेरिकियों के बेसों के बगल में रहने वाली इन कोठरियों में किसी को भी प्रवेश करने की इजाजत नहीं दी जाती।

दुनिया भर में गुस्से की लहर

इन पाशविक (हालांकि यह पाशविकता से भी बदतर है) अत्याचारों के खिलाफ दुनिया भर में गुस्सा और नफरत की आग फैल गई। यह दबाव बढ़ गया कि गठबन्धन सेनाएं इराक छोड़ दें। 5 मई को अबू ग़रेब जेल के कैदियों के लगभग 10,000 परिवार सदस्यों ने एक प्रदर्शन करके अपने प्रिय जनों की रिहाई की मांग की। मुस्लिम देशों में और अरब जगत् में विरोध की लहर उठी।

पूर्व में कैदी रहे 19 वर्षीय अब्दुल रज्ज़ाक नामक युवक ने यह प्रश्न किया, "इस किस्म के अत्याचारों का शिकार होने के बाद हम अमेरिका से नफरत किए बिना कैसे रह पाएंगे?" शियाओं का विद्रोही नेता मुख्तदा अल सद्र ने यह कहकर अपने गुस्से का इज़हार किया, "इराकी कैदियों पर हिंसाचार करके आनन्द प्राप्त करने वाले सैडिस्टों से किस तरह का जनवाद व स्वतंत्रता की उम्मीद कर सकेंगे?"

अब निचले स्तर के अधिकारियों और आम सैनिकों के खिलाफ कोर्ट मार्शल चलाए जा रहे हैं। साफ जाहिर है कि हल्की-सी सजाओं से इन्हें छोड़ा जाएगा। पर उच्च स्तर के सैन्य अधिकारियों को तो वे छूएंगे भी नहीं। इसीलिए पारदर्शिता बरतने का ढिंढ़ोरा पीटने वाला रम्सफेल्ड अपनी गवाही के दौरान इस सवाल का जवाब देने से टाल गया कि जब इराकी कैदियों के साथ पूछताछ करते हुए हिंसाचार किया जा रहा था तब उच्च स्तर के कमाण्डर के बतौर कौन थे। दरअसल यह बात पिछले मई में खुल गई थी कि रम्सफेल्ड और रक्षा खुफिया विभाग के सहायक सचिव स्टीफेन कोम्बोन दोनों ने 2003 में ही इसकी मंजूरी दी थी कि इराक में पूछताछ के "कठोर" तौर-तरीके अपनाए जाएं। अमेरिकी सेना ने चंद कमिशन्ड और नॉन-कमिशन्ड अधिकारियों को ही निलम्बित किया। उसका कहना है कि बाकी सब ठीक-ठाक है ! हे अमेरिकी जनवाद, तुझे सलाम !!

दुनिया भर में रम्सफेल्ड के इस्तीफे की पुरजोर मांग उठी। यातनाओं के खिलाफ अन्तर्राष्ट्रीय नियम और जेनीवा समझौते के उल्लंघन के लिए उस पर युद्ध अपराधों की सुनवाई करने वाली अदालत में मुकदमा चलाया जाना चाहिए, यह मांग भी उठी। पर इराकी जनता साम्राज्यवादियों को जरूर सजा देगी। मानवजाति को शर्मसार कर देने वाली बर्बरतापूर्ण यातनाओं और अत्याचारों के दृश्यों को देख चुकी विश्व जनता, खासतौर पर इराकी जनता और भी सख्त नफरत से अमेरिकियों के खिलाफ लड़ेगी। उसकी और उसके सहयोगी देशों की सेनाओं को ऐसी मार मारकर भगा देगी जैसे कि पागल कुत्तों को खदेड़ा जाता है। वह दिन अब ज्यादा दूर भी नहीं है। ✶

अक्टूबर 2004

अमेरिकी पत्रकार एन्ना लुईस स्ट्रोंग के साथ बातचीत

अगस्त 1946

एन्ना लुईस स्ट्रोंग : आपके विचार से, क्या निकट भविष्य में चीन की समस्याओं के राजनीतिक और शांतिपूर्ण हल की कोई आशा है?

माओ त्सेतुङ : अमेरिका सरकार के रवैये पर निर्भर है। अगर च्याङ काई-शेक को गृहयुद्ध में मदद देने वाले अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों के हाथ अमेरिकी जनता पीछे खींच ले, तो शांति की आशा की जा सकती है।

प्रश्न : मान लीजिए, अमेरिका च्याङ काई-शेक को जितनी मदद अब तक दे चुका है उसके अलावा और मदद न दे, तो च्याङ काई-शेक कितने दिन और लड़ सकता है?

उत्तर : एक साल से ज्यादा।

प्रश्न : क्या च्याङ काई-शेक आर्थिक दृष्टि से इतनी देर तक टिक सकता है?

उत्तर : हां, टिक सकता है।

प्रश्न : अगर अमेरिका यह साफ तौर पर जाहिर कर दे कि वह च्याङ काई-शेक को अब कोई मदद नहीं देगा, तो क्या होगा?

उत्तर : फिलहाल इस बात के कोई आसार नजर नहीं आ रहे कि अमेरिका सरकार और च्याङ काई-शेक अल्प काल में लड़ाई बन्द करना चाहते हैं।

प्रश्न : कम्युनिस्ट पार्टी कब तक लड़ सकती है?

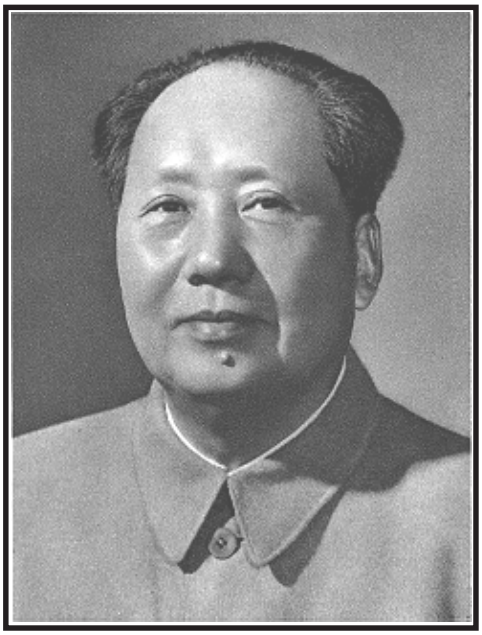

उत्तर : जहां तक हमारी इच्छा का संबंध है, हम एक दिन भी नहीं लड़ना चाहते। लेकिन अगर हालात ने हमें लड़ने के लिए मजबूर कर दिया, तो हम अन्त तक लड़ सकते हैं।

प्रश्न : अगर अमेरिकी जनता मुझसे यह सवाल करे कि कम्युनिस्ट पार्टी लड़ाई क्यों कर रही है, तो मैं क्या जवाब दूंगी?

उत्तर : क्योंकि च्याङ काई-शेक चीनी जनता को कत्ल करना चाहता है और अगर जनता को जीवित रहना है तो उसे आत्मरक्षा करनी होगी। यह बात अमेरिकी जनता समझ सकती है।

प्रश्न : अमेरिका द्वारा सोवियत संघ के खिलाफ युद्ध छेड़े जाने की सम्भावना के बारे में आपकी क्या राय है?

उत्तर : सोवियत-विरोधी युद्ध के बारे में किए गए प्रचार के दो पहलू हैं। एक तरफ तो अमेरिकी साम्राज्यवाद सोवियत संघ के खिलाफ सचमुच युद्ध की तैयारी कर रहा है; सोवियत-विरोधी युद्ध का वर्तमान प्रचार और अन्य सोवियत-विरोधी प्रचार सोवियत-विरोधी युद्ध के लिए राजनीतिक तैयारी है। दूसरी तरफ, यह प्रचार अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों द्वारा पैदा किया गया धुएं का पर्दा है, जिसका उद्देश्य अमेरिकी साम्राज्यवाद के सामने मौजूद बहुत से वास्तविक अन्तरविरोधों को ढकना है। ये अन्तरविरोध अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों और अमेरिकी जनता के बीच, अमेरिकी साम्राज्यवाद और दूसरे पूंजीवादी देशों के बीच तथा अमेरिकी साम्राज्यवाद और औपनिवेशिक व अर्ध-औपनिवेशिक देशों के बीच हैं। फिलहाल सोवियत-विरोधी युद्ध छेड़ने के अमेरिकी नारे का असली मतलब है अमेरिकी जनता का दमन करना और पूंजीवादी दुनिया में अपनी हमलावर शक्तियों का विस्तार करना। जैसा कि आपको मालुम ही है, हिटलर और उसके सहयोगी जापानी युद्ध-सरदारों ने अपने देश की जनता को गुलाम बनाने के लिए और दूसरे देशों पर हमला करने के लिए एक लम्बे अरसे तक सोवियत-विरोधी नारों का एक बहाने के तौर पर इस्तेमाल किया। अब अमेरिकी प्रतिक्रियावादी भी बिलकुल वही काम कर रहे हैं।

युद्ध छेड़ने के लिए, अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों को पहले अमेरिकी जनता पर प्रहार करना होगा। अमेरिकी जनता पर उनका प्रहार चल ही रहा है। वे अमेरिकी मजदूरों और जनवादी तत्वों का राजनीतिक और आर्थिक दमन कर रहे हैं और अमेरिका में फासीवाद लाने की तैयारी कर रहे हैं। अमेरिकी जनता को अपने देश के प्रतिक्रियावादियों के प्रहारों का मुकाबला करने के लिए उठ खड़े होना चाहिए। मुझे विश्वास है कि वह ऐसा करेगी।

अमेरिका और सोवियत संघ के बीच बेहद विशाल इलाका फैला हुआ है, जिसमें यूरोप, एशिया और अफ्रीका के बहुत से पूंजीवादी, औपनिवेश्क और अर्ध-औपनिवेशिक देश हैं। इन देशों को अपने काबू में किए बिना सोवियत संघ पर हमला करने का अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों के लिए सवाल ही नहीं उठता। आज अमेरिका प्रशान्त महासागर में एक ऐसा विशाल इलाका अपने नियंत्रण में कर चुका है जिसका क्षेत्रफल उन तमाम क्षेत्रों से भी ज्यादा है जिन पर पहले बरतानिया का प्रभुत्व था; जापान, चीन का क्वोमिन्ताङ शासित प्रदेश, आधा कोरिया और दक्षिणी प्रशान्त महासागर उसके नियंत्रण में है। मध्य अमेरिका और दक्षिणी अमेरिका में वह काफी अरसे से अपना प्रभुत्व जमाए हुए है। वह समूचे बरतानवी साम्राज्य और पश्चिमी यूरोप को भी अपने नियंत्रण में करना चाहता है। अमेरिका तरह-तरह के बहाने गढ़कर बहुत से देशों में बड़े पैमाने पर सैन्य-विन्यास कर रहा है और अपने अड्डे कायम कर रहा है। दुनिया में जगह-जगह अमेरिका द्वारा जो फौजी अड्डे कायम किए गए हैं, या जिन्हें कायम करने की वह तैयारी कर रहा है, वे सब अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों के कथनानुसार सोवियत संघ के खिलाफ हैं। यह सच है कि ये फौजी अड्डे सोवियत संघ के खिलाफ हैं। लेकिन फिलहाल अमेरिकी हमले का शिकार पहले सोवियत संघ नहीं बल्कि वे देश हुए हैं जिनमें ये फौजी अड्डे कायम किए गए हैं। मुझे यकीन है कि जल्दी ही ये देश समझ जाएंगे कि

उनका उत्पीड़न सचमुच कौन कर रहा है, सोवियत संघ या अमेरिका। अमेरिकी प्रतिक्रियावादी एक न एक दिन तमाम दुनिया की जनता को अपने खिलाफ पाएंगे।

बेशक, मेरा मतलब यह नहीं है कि अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों का सोवियत संघ पर हमला करने का इरादा नहीं है। सोवियत संघ विश्वशान्ति का रक्षक है और अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों को तमाम दुनिया पर आधिपत्य जमाने से रोकने वाला शक्तिशाली तत्व है। सोवियत संघ के रहते अमेरिका और दुनिया के प्रतिक्रियावादियों की कुआकांक्षा किसी भी सूरत में पूरी नहीं हो सकती। यही वजह है कि सोवियत संघ से अमेरिकी प्रतिक्रियावादी बेहद नफरत करते हैं और दरअसल इस समाजवादी देश को खत्म करने के सपने देखते हैं। लेकिन आज, जबकि दूसरा विश्वयुद्ध खत्म हुए अभी ज्यादा अरसा नहीं बीता, अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों द्वारा अमेरिका-सोवियत युद्ध के बारे में मचाए गऐ शोरगुल और उनके द्वारा पैदा किए गए गन्दे माहौल के कारण उनके असली मकसद पर नजर डाले बिना नहीं रहा जाता। जाहिर है कि सोवियत-विरोधी नारे की आड़ में वे बड़े पागलपन के साथ अमेरिकी मजदूरों और जनवादी तत्वों पर प्रहार कर रहे हैं तथा उन तमाम देशों को, जो अमेरिकी विस्तार का शिकार हैं अमेरिका के अधीन देशों में बदल रहे हैं। मेरा ख्याल है कि अमेरिकी जनता को और अमेरिकी हमले के खतरे के शिकार तमाम देशों की जनता को अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों और विभिन्न देशों में मौजूद उनके पालतू कुत्तों के प्रहार का मुकाबला करने के लिए एक हो जाना चाहिए। इस संघर्ष में जीत हासिल करके ही तीसरे विश्वयुद्ध को टाला जा सकता है; वरना इसे नहीं टाला जा सकता।

प्रश्न : यह बहुत अच्छी व्याख्या है। लेकिन मान लीजिए, अमेरिकी परमाणु-बम का इस्तेमाल करता है? और मान लीजिए, अमेरिका आइसलैण्ड, ओकीनावा और चीन में कायम अपने अड्डों से सोवियत संघ पर बमबारी कर देता है?

उत्तर : परमाणु-बम एक कागजी बाघ है, जिसे लोगों को डराने के लिए अमेरिकी प्रतिक्रियावादी इस्तेमाल करते हैं। यह देखने में भयानक मालूम होता है, लेकिन वास्तव में यह भयानक है नहीं। इसमें संदेह नहीं कि परमाणु-बम एक व्यापक संहारकारी शस्त्र है, लेकिन युद्ध की हार-जीत का निर्णय जनता करती है, एक या दो नए किस्म के हथियार नहीं।

तमाम प्रतिक्रियावादी कागजी बाघ हैं। प्रतिक्रियावादी देखने में बड़े डरावने लगते हैं, लेकिन दरअसल वे इतने शक्तिशाली नहीं होते। दूरदृष्टि से देखा जाए, तो वास्तव में शक्तिशाली प्रतिक्रियावादी नहीं होते बल्ति जनता होती है। रूस में 1917 की फरवरी क्रांति से पहले आखिर कौन सा पक्ष सचमुच शक्तिशाली था? बाहर से देखने पर उस समय जार शक्तिशाली था; लेकिन फरवरी क्रांति के महज एक झोंके ने उसे उड़ा दिया। अन्ततोगत्वा, रूस में शक्ति मजदूरों किसानों और सैनिकों की सोवियतों के पक्ष में थी। जार महज एक कागजी बाघ था, क्या हिटलर किसी जमाने में बहुत शक्तिशाली नहीं माना जाता था? लेकिन इतिहास ने उसे कागजी बाघ साबित कर दिया। ऐसा ही मुसोलिनी भी था, ऐसा ही जापानी साम्राज्यवाद भी था। इसके विपरीत, सोवियत संघ तथा तमाम देशों की जनवाद व आजादी से प्रेम करने वाली जनता लोगों के अनुमान से कहीं अधिक शक्तिशाली साबित हुई है।

च्याङ काई-शेक और उसके समर्थक अमेरिकी प्रतिक्रियावादी भी कागजी बाघ हैं। अमेरिकी साम्राज्यवाद की चर्चा करते समय लोगों को ऐसा लगता है कि वह बेहद शक्तिशाली है। चीन के प्रतिक्रियावादी अमेरिका की "शक्ति" का इस्तेमाल चीनी जनता को डराने के लिए कर रहे हैं। लेकिन यह बात साबित हो जाएगी कि इतिहास के सभी प्रतिक्रियावादियों की तरह, अमेरिकी प्रतिक्रियावादियों को ज्यादा शक्ति नहीं है। अमेरिका में दूसरी तरह के लोग – अमेरिकी जनता – सचमुच शक्तिशाली हैं।

मिसाल के लिए चीन की परिस्थिति को ही लीजिए। हम लोग आज सिर्फ कोदों और बंदूक पर निर्भर हैं; लेकिन इतिहास अन्त में यह साबित कर देगा कि हमारा कोदों और बंदूक का योग च्याङ काई-शेक के हवाई जहाजों और टैंकों के योग से ज्यादा शक्तिशाली है। हालांकि चीनी जनता के सामने अब भी बहुत सी कठिनाइयां मौजूद हैं, हालांकि चीनी जनता काफी समय तक अमेरिकी साम्राज्यवादियों व चीनी प्रतिक्रियावादियों के मुश्तरफा हमलों के कारण बहुत सी मुसीबतों का सामना करेगी, फिर भी एक न एक दिन ये प्रतिक्रियावादी परास्त होंगे और हम विजयी होंगे। इसका कारण और कोई नहीं बल्कि यह है: प्रतिक्रियवादी प्रतिक्रिया का प्रतिनिधित्व करते हैं, जबकि हम प्रगति का प्रतिनिधित्व करते हैं। ✶

(.... पृष्ठ 32 का शेष)

लिए आन्ध्र-उड़ीसा सीमान्त इलाके में गई थीं। दुर्भाग्य से वह वहीं दुश्मन की गोलियों की शिकार बनकर शहीद हो गई थीं।

हालांकि कॉमरेड राजेश्वरी की शहादत ने कॉमरेड साकेत को गहरा सदमा पहुंचाया, इसके बावजूद भी वह आन्दोलन में मजबूती से खड़े रहे। नए लक्ष्यित इलाके को आधार इलाके के लक्ष्य से गुरिल्लाजोन में विकसित करने के लिए उन्होंने अपनी सारी ताकत झोंक दी।

कॉमरेड साकेत ने न सिर्फ कर्नाटक में क्रान्तिकारी आन्दोलन के निर्माण में अहम भूमिका निभाई, बल्कि कर्नाटक के इतिहास को मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण से लिखकर सैद्धान्तिक स्तर पर भी शानदार योगदान किया। 'मेकिंग हिस्टरी' (इतिहास का निर्माण) के नाम से उन्होंने एक किताब लिखी जिसके दो भाग प्रकाशित हो चुके थे। वह तीसरा भाग पूरा नहीं कर सके क्योंकि मलनाड में आन्दोलन का नेतृत्व करने में पूरी तरह व्यस्त रहने की वजह से उन्हें वक्त नहीं मिल पा रहा था। उनकी किताब कर्नाटक इतिहास पर अब तक लिखी गई किताबों में शायद सर्व श्रेष्ठ किताब मानी जाएगी जो कि जनता के दृष्टिकोण से लिखी गई। उनकी किताब यह दर्शाती है कि जनता और सिर्फ जनता ही इतिहास का असली निर्माता है। यहां तक कि कई शिक्षाविदों और बुर्जुआई स्कॉलरों ने भी उनकी किताब को शानदार काम कहकर सराहा।

आइए साथियो, कॉमरेड साकेत राजन की शहादत को लाल सलाम करें और उनके अधूरे मकसद का बोझ अपने कंधों पर लेकर, आंखों से बहते आंसुओं को पोंछकर आगे बढ़ें। देश के कोने-कोने में लोकयुद्ध को फैलाकर आधार इलाकों का निर्माण करते हुए सामन्तवाद, दलाल पूंजीवाद और साम्राज्यवाद को उखाड़ फेंककर देशव्यापी विजय हासिल करके उनके सपनों के खुशहाल भारत का निर्माण करने का बीड़ा उठाएं। ✶

नेपाल में जारी जनयुद्ध का भरपूर समर्थन करो

नेपाल के क्रान्तिकारी आधार क्षेत्रों और नेपाली जनता पर ज्ञानेन्द्र की फौजी सरकार के फासीवादी हमलों की निन्दा करो !!

ज्ञानेन्द्र की राजशाही, अमेरिकी साम्राज्यवाद और भारतीय विस्तारवाद के खिलाफ लड़ने और जनता के सच्चे लोकतंत्र की स्थापना करने एकजुट हो !!

पड़ोसी नेपाल में 31 जनवरी को राजा ज्ञानेन्द्र ने शेर बहादुर देउबा की सरकार को बरखास्त करके देश में आपतकाल की घोषणा कर दी। ये घटनाएं समूची दुनिया के, खासकर दक्षिण एशिया और भारत के लोकतंत्र प्रेमी अवाम के लिए गंभीर चिन्ता का विषय हैं। राजा ने संविधान के खिलाफ चलकर सभी अधिकारों को अपने हाथ में ले लिया और अपने फासीवादी शासन की खिलाफत करने वाली तमाम ताकतों को दबाकर रख दिया। मीडिया पर बड़े ही भद्दे अंदाज में सेन्सरशिप लगा दिया और नेपाल के नागरिकों को देश के अन्दर और बाहर संचार की सभी सुविधाओं से वंचित कर दिया। नेपाली जनता बेहद दम घोंटू हालात में जीने को मजबूर है। सैन्य सरकार अब इस योजना में है कि पश्चिमी नेपाल तथा समूचे नेपाल के क्रान्तिकारी आधार क्षेत्रों पर हवाई बमबारी, आर्थिक नाकेबन्दी और खूनी कत्लेआमों के जरिए चौतरफा हमला छेड़ दिया जाए। तानाशाह ज्ञानेन्द्र की इन दुष्टतापूर्ण चालों को साम्राज्यवादियों, खासकर अमेरिकी साम्राज्यवादियों, और साथ-साथ भारतीय शासक वर्गों का पूरा समर्थन प्राप्त है, इसके बावजूद भी कि वे बहुदलीय लोकतंत्र को लेकर बढ़-चढ़ कर क्यों न बोलते हों।

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) की केन्द्रीय कमेटी राजा ज्ञानेन्द्र के इस अधिकारवादी, निरंकुश और तानाशाही भरे शासन की कड़े शब्दों में निंदा करती है। राजा ज्ञानेन्द्र सामन्ती राजशाही की एक सड़ी-गली और पुरानी व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है जो सभी लोकतांत्रिक संस्थानों और नेपाल के विशाल जन समुदायों की लोकतांत्रिक आकांक्षाओं के बिलकुल खिलाफ है। भारत और दक्षिण एशिया की तमाम लोकतंत्र-प्रेमी जनता को चाहिए कि वह नेपाल के तानाशाह के फासीवादी और बर्बरतापूर्ण कदमों का पूरी तरह से खण्डन करे तथा ज्ञानेन्द्र के फासीवादी शासन के खिलाफ नेपाली जनता के संघर्ष के प्रति सक्रिय भाईचारे का प्रदर्शन करे। दरअसल, सरकारों को बरखास्त करने में राजा पहले से ही बदनाम था जिसने अतीत में तीन बार ऐसा किया।

आपतकाल लागू करने के पीछे राजा ज्ञानेन्द्र का मुख्य उद्देश्य यही है कि नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के नेतृत्व में जारी क्रान्तिकारी जनयुद्ध को कुचल दिया जाए। नेकपा (माओवादी) तमाम सामन्तवाद-विरोधी व साम्राज्यवाद-विरोधी ताकतों और तमाम उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं को एकजुट करते हुए एक देशव्यापी क्रान्तिकारी आन्दोलन का नेतृत्व कर रही है। सड़ी-गली राजशाही को उखाड़ फेंककर पहले नेपाल में लोकतांत्रिक जन गणराज्य की स्थापना करने और आखिरकार समाजवाद और साम्यवाद की स्थापना करने के लिए माओवादी लड़ रहे हैं। देश के देहाती इलाकों के एक तिहाई हिस्से पर माओवादियों ने कब्जा कर लिया है। आज नेकपा (माओवादी) ही एक मात्र ताकत है जो सच्चे लोकतंत्र के लिए लड़ रही है और वही एक ऐसी ताकत है जो नेपाल में राजशाही को खत्म करने और जनता के सच्चे लोकतंत्र की स्थापना करने की क्षमता रखती है। इस डर से कि निकट भविष्य में ही नेकपा (माओवादी) राजसत्ता पर कब्जा कर सकती है, अमेरिकी साम्राज्यवाद-नीत साम्राज्यवादियों ने राजा को उसके खूनी दमन अभियान में हर प्रकार के समर्थन व सहयोग देने का वादा किया है। अमेरिकी साम्राज्यवादी नेपाल में कदम रखने के लिए हमेशा तैयार हैं, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने इराक में किया था और अब इरान व सीरिया में करने को बेताब हैं, ताकि माओवादी क्रान्तिकारी आधार क्षेत्रों को तबाह किया जा सके और सड़ी-गली व प्रतिक्रियावादी शासन की हिफाजत की जा सके। इस प्रकार की दखलंदाजी के लिए बहुदलीय लोकतंत्र को एक बहाने के रूप में इस्तेमाल किया जाएगा। सत्ता में चाहे कोई भी रहे, सत्ता पर माओवादियों के कब्जे का खतरा अमेरिकी साम्राज्यवादियों को एक बहाना होगा ताकि वह नेपाल पर अपना खूनी शिकंजा कस सके।

नेपाल के घटनाचक्र के प्रति भारतीय विस्तारवादी शासकों द्वारा व्यक्त किया गया असन्तोष कोरी बकवास है। हालांकि भारतीय शासक वर्ग चाहते हैं कि नेपाली शासक माओवादियों को बेहद निर्मम तरीके से कुचल दें। पर इतना जरूर है कि वे चाहते हैं कि यह दमन बहुदलीय संसदीय लोकतंत्र की आड़ में हो, ठीक वैसा ही जैसा कि वे खुद तथाकथित लोकतंत्र की आड़ में निंदनीय कत्लेआमों को अंजाम देते हुए कश्मीर और पूर्वोत्तर में करते आ रहे हैं। बड़ी बात यह है कि भारतीय शासक वर्ग नेपाल पर राजनीतिक नियंत्रण पाना चाहते हैं जिसके आधे व्यापार पर पहले से ही उनका नियंत्रण है। चूंकि देउबा और कोइराला भारतीय शासक वर्गों के वफादार दलाल हैं, इसलिए सहज ही भारतीय शासक राजा पर दबाव डाल रहे हैं कि वह "लोकतांत्रिक तरीके से चुनी गई" पार्टियों को अपना काम करने दे।

माओवादियों को कुचलने के लिए शाही नेपाली सेना (आरएनए) को भारतीय शासक वर्ग प्रशिक्षण देते आ रहे हैं। सत्ता में चाहे जो भी रहे, नेपाली सरकार को हर प्रकार की मदद व सहायता देते आ रहे हैं। सभी साम्राज्यवादियों और साथ ही साथ भारतीय विस्तारवादियों का साझा लक्ष्य नेपाल में सत्ता पर माओवादियों के कब्जे को रोकना और उनके क्रान्तिकारी आधार क्षेत्रों को तबाह करना है। ज्ञानेन्द्र के बर्बरतापूर्ण कदमों के खिलाफ सतही तौर पर वे जो भी बोलें, सचाई तो यह है कि ये तमाम गिद्ध माओवादियों को कुचलने में ज्ञानेन्द्र की मदद करते हैं। भारतीय शासक वर्ग सीमावर्ती

इलाकों में गिरफ्तारियां, प्रत्यर्पण और यहां तक कि भारतीय इलाके में घुस आने वालों या भारतीय अस्पतालों में इलाज करवाने वालों की हत्या भी करते हुए माओवादियों का खूनी दमन करने में अपने नेपाली समकक्षों की मदद कर रहे हैं। आपातकाल लागू करने के बाद इन कार्यवाहियों में तेजी लाई गई और भारतीय सुरक्षा बलों को भारत-नेपाल सीमा पर बड़ी संख्या में तैनात किया गया ताकि भारत में माओवादी ताकतों के प्रवेश को रोका जा सके। इस प्रकार वे ज्ञानेन्द्र की प्रतिक्रियावादी सेना की मदद कर रहे हैं ताकि वे अपनी जनता का कत्लेआम कर सकें।

हर फासीवादी शासक की तरह, राजा ज्ञानेन्द्र भी चाहता है कि शासक वर्गों के एक तबके के साथ-साथ सभी विरोधियों को कुचलकर सम्पूर्ण सत्ता अपने हाथ में रख ले। इस मूर्खतापूर्ण कदम ने राजा को अलग-थलग कर दिया और इससे राजा के निरंकुश शासन का विरोध करने वाली तमाम ताकतों का ध्रुवीकरण बढ़ता जाएगा। निरंकुश शासन की खिलाफत करने वाली तमाम ताकतों का नेतृत्व करते हुए माओवादी निश्चित रूप से ज्यादा ताकतवर बन जाएंगे। राजा की तानाशाही के खिलाफ और नेपाल में जनता के जनतांत्रिक गणराज्य की स्थापना के लिए जारी संघर्ष में नेकपा (माओवादी) और नेपाल के जन समुदायों के प्रति भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) अपना सम्पूर्ण और स्पष्ट समर्थन प्रकट करती है। हमारी पार्टी भारतीय शासक वर्गों को चेतावनी देती है कि नेपाल में दखलंदाजी करना बन्द करें और माओवादियों को कुचलने के अभियान में नेपाली शासक वर्गों की सहायता करना बन्द करें। हम यह भी मांग करते हैं कि ज्ञानेन्द्र की फासीवादी सरकार द्वारा मचाए जा रहे खूनी कत्लेआमों से बचने सीमा पार कर आने वाले नेपालियों को भारतीय सुरक्षा बल गिरफ्तार और प्रताड़ित करना बन्द करें।

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) की केन्द्रीय कमेटी तमाम पार्टी कैडरों, पीएलजीए लड़ाकुओं और भारत के क्रान्तिकारी जन समुदायों का आह्वान करती है कि नेपाल में फासीवादी कदमों का विरोध करते हुए, आपतकाल को फौरन उठाने की मांग करते हुए तथा माओवादी और अन्य जनवादी ताकतों, जो अमेरिकी साम्राज्यवादियों और भारतीय विस्तारवादियों की दखलंदाजी का किसी भी तरीके से विरोध कर रही हैं, के खिलाफ जारी दमन अभियान को बन्द करने की मांगों को लेकर रैलियों और प्रदर्शनों का आयोजन किया जाए। हमारी केन्द्रीय कमेटी पीएलजीए लड़ाकुओं का यह भी आह्वान करती है कि वे नेपाल की सीमा पर भारतीय सुरक्षा बलों की ''तलाशी और तबाही'' कार्यवाहियों का जरूर प्रतिरोध करें।

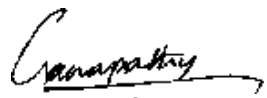

(गणपति)

महासचिव, केन्द्रीय कमेटी (अस्थाई),

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)

5 फरवरी 2005

दुश्मन बलों पर पीएलजीए के हमले तेज

सरगुजा इलाके में पीएलजीए के एम्बुश में थानेदार समेत 3 पुलिस वालों का सफाया

छत्तीसगढ़ प्रदेश के बलरामपुर पुलिस जिले में पीएलजीए योद्धाओं ने 6 जनवरी को पुलिस पर घात लगाकर हमला किया जिसमें एक थानेदार समेत तीन पुलिस वाले मारे गए। सरगुजा इलाके के तहत आने वाले बलरामपुर पुलिस जिले के इंदरखोरी गांव के निकट पीएलजीए ने पुलिस दल पर तब हमला किया जब वह अपनी गश्त पूरी करके जीप में सवार होकर वापस जा रहा था। इस हमले के दौरान दोनों पक्षों में गोलीबारी हुई पर पीएलजीए के सैनिक पुलिस पर भारी पड़े। बाद में मृत पुलिस के हथियार भी छापामारों ने छीन लिए जिनमें कुछ एसएलआरें भी शामिल हैं। झारखण्ड और छत्तीसगढ़ राज्यों की सीमा पर स्थित इस इलाके में दोनों राज्य सरकारें संयुक्त रूप से कई दमन अभियान चलाते हुए क्रान्तिकारी आन्दोलन का सफाया करने की जी-तोड़ कोशिश कर रही हैं। व्यापक गिरफ्तारियां, मारपीट, महिलाओं के साथ बलात्कार, झूठी मुठभेड़ें, आदि आम हो चुकी हैं। इस हमले से पीएलजीए ने जनता में आत्मविश्वास बढ़ाया।

बिहार में पीएलजीए के हमले में एसपी समेत पांच पुलिस वालों का सफाया

5 जनवरी को बिहार के मुंगेर जिले के एसपी अपने गारदों के साथ दमन अभियान के सिलसिले में एक जीप में जा रहा था, तब पीएलजीए के जवानों ने बारूदी सुरंग का विस्फोट किया। इस हमले में जीप में सवार सारे पुलिस वाले मारे गए। दरअसल एसपी माओवादियों की खोजबीन में गया हुआ था। इस घटना के एक दिन पहले, यानी 4 जनवरी को मुंगेर के कजरा स्टेशन पर पीएलजीए ने बीएमपी (बिहार मिलिटरी पुलिस) पर हमला करके 5 रायफलें छीनी ली थीं। इसके बाद मुंगेर एसपी सुरेन्द्रबाबू अपने दल बल समेत माओवादी छापामारों की धरपकड़ के सिलसिले में खड़गपुर जंगल में छापेमारी कर लौट रहा था, तब पीएलजीए ने उड़ा दिया। एक तरफ राज्य में चुनाव की घोषणा हो चुकी थी और सारी वोटबाजी पार्टियां जनता को फिर एक बार धोखा देने निकल रही थीं, तभी यह धमाका करके पीएलजीए ने यह ऐलान किया कि उसे इस शोषणकारी व्यवस्था से और उसके अन्तर्गत होने वाले चुनावों की ढोंगबाजी से धिक्कार है। ★

असेम्बली बम काण्ड पर सेशनकोर्ट में दिया गया बयान

(23 मार्च 2005 – शहीद भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव की 74वीं बरसी का दिन है। इस मौके पर हम यहां भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त का ऐतिहासिक बयान प्रस्तुत कर रहे हैं जो असेम्बली में बम फेंकने के बाद 6 जून 1929 को दिल्ली के सेशन जज लियोनाई मिडिल्टन की अदालत में दिया गया था।

– सम्पादक)

हमारे ऊपर गम्भीर आरोप लगाए गए हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि हम भी अपनी सफाई में कुछ शब्द कहें। हमारे कथित अपराध के सम्बन्ध में निम्नलिखित प्रश्न उठते हैं :

(1) क्या वास्तव में असेम्बली में बम फेंके गए थे, यदि हां तो क्यों?

(2) नीचे की अदालत में हमारे ऊपर जो आरोप लगाए गए हैं, वे सही हैं या गलत?

पहले प्रश्न के पहले भाग के लिए हमारा उत्तर स्वीकारात्मक है, लेकिन तथाकथित चश्मदीद गवाहों ने इस मामले में जो गवाही दी है, वह सरासर झूठ है। चूंकि हम बम फेंकने से इनकार नहीं कर रहे हैं, इसलिए यहां उन गवाहों के बयानों की सचाई की परख भी हो जानी चाहिए। उदाहरण के लिए हम यहां बता देना चाहते हैं कि सार्जेन्ट टैरी का यह कहना कि उन्होंने हमारे में से एक के पास से पिस्तौल बरामद की, वह एक सफेद झूठ है, क्योंकि जब हमने अपने आपको पुलिस के हाथों सौंपा तो हममें से किसी के पास भी पिस्तौल न थी। जिन गवाहों ने कहा कि उन्होंने हमें बम फेंकते देखा था, वे झूठ बोलते हैं। न्याय तथा निष्कपट व्यवहार को सर्वोपरि मानने वाले लोगों को झूठी बातों से एक सबक लेना चाहिए। साथ ही हम सरकारी वकील के उचित व्यवहार तथा अदालत के अभी तक के न्यायसंगत रवैये को भी स्वीकार करते हैं।

पहले प्रश्न के दूसरे हिस्से का उत्तर देने के लिए हमें इस बमकाण्ड जैसी ऐतिहासिक घटना के कुछ विस्तार में जाना पड़ेगा। हमने यह काम किस अभिप्राय से तथा किन परिस्थितियों के बीच किया, इसकी पूरी एवं खुली सफाई आवश्यक है।

जेल में हमारे पास कुछ पुलिस अधिकारी आए थे। उन्होंने हमें बताया कि लार्ड इर्विन ने इस घटना के बाद असेम्बली के दोनों सदनों के संयुक्त अधिवेशन में कहा है कि "यह विद्रोह किसी व्यक्ति विशेष के खिलाफ नहीं, बल्कि सम्पूर्ण शासन व्यवस्था के विरुद्ध था।" यह सुनकर हमने तुरन्त भांप लिया कि लोगों ने हमारे इस काम के उद्देश्य को सही तौर पर समझ लिया है।

मानवता को प्यार करने में हम किसी से भी पीछे नहीं हैं। हमें किसी से व्यक्तिगत द्वेष नहीं है और हम प्राणीमात्र को हमेशा आदर की निगाह से देखते आए हैं। हम न तो बर्बरतापूर्ण उपद्रव करने वाले देश के कलंक हैं, जैसा कि सोशलिस्ट कहलाने वाले दीवान चमनलाल ने कहा है, और न ही हम पागल हैं, जैसा कि लाहौर के 'ट्रिब्यून' तथा कुछ अन्य समाचार-पत्रों ने सिद्ध करने का प्रयास किया है। हम तो केवल अपने देश के इतिहास, उसकी मौजूदा परिस्थिति तथा अन्य मानवोचित आकांक्षाओं के मननशील विद्यार्थी होने का विनम्रपूर्वक दावा भर कर सकते हैं। हमें ढोंग तथा पाखण्ड से नफरत है।

एक अपकारजनक संस्था

यह काम हमने किसी व्यक्तिगत स्वार्थ अथवा विद्वेष की भावना से नहीं किया है। हमारा उद्देश्य केवल उस शासन-व्यवस्था के विरुद्ध प्रतिवाद प्रकट करना था जिसके हर एक काम से उसकी अयोग्यता ही नहीं, बल्कि अपकार करने की उसकी असीम क्षमता भी प्रकट होती है। इस विषय पर हमने जितना विचार किया, उतना ही हमें इस बात का दृढ़ विश्वास होता गया कि मौजूदा शासन-व्यवस्था केवल संसार के सामने भारत की लज्जाजनक तथा असहाय अवस्था का ढिंढ़ोरा पीटने के लिए ही कायम है और एक गैर-जिम्मेदार तथा निरंकुश शासन का प्रतीक है।

जनता के प्रतिनिधियों ने कितनी ही बार राष्ट्रीय मांगों को सरकार के सामने रखा, परन्तु उसने उन मांगों की सर्वथा अवहेलना करके हर बार उन्हें रद्दी की टोकरी में डाल दिया। सदन द्वारा पास किए गए गम्भीर प्रस्तावों को भारत की तथाकथित पार्लियामेन्ट के सामने ही तिरस्कारपूर्वक पैरों तले रौंदा गया है, दमनकारी तथा निरंकुश कानूनों को समाप्त करने की मांग करने वाले प्रस्तावों को हमेशा अवज्ञा की दृष्टि से ही देखा गया है और जनता द्वारा निर्वाचित सदस्यों ने सरकार के जिन कानूनों तथा प्रस्तावों को अवांछित एवं अवैधानिक बताकर रद्द कर दिया था, उन्हें केवल कलम हिलाकर ही सरकार ने लागू कर दिया है।

संक्षेप में, बहुत कुछ सोचने के बाद भी एक ऐसी संस्था के अस्तित्व का औचित्य हमारी समझ में नहीं आ सका, जो बावजूद उस तमाम शानोशौकत के, जिसका आधार भारत के करोड़ों मेहनतकशों की गाढ़ी कमाई है, मात्र एक दिल को बहलाने वाली, थोथी, दिखावटी और शरारतों से भरी हुई संस्था है। हम सार्वजनिक नेताओं की मनोवृत्ति को समझ पाने में भी असमर्थ हैं। हमारी समझ में नहीं आता कि हमारे नेतागण भारत की असहाय परतन्त्रता की खिल्ली उड़ाने वाले इतने स्पष्ट एवं पूर्वनियोजित प्रदर्शनों पर सार्वजनिक सम्पत्ति एवं समय बरबाद करने में सहायक क्यों बनते हैं।

हम इन्हीं प्रश्नों तथा मजदूर आन्दोलन के नेताओं की धरपकड़ पर विचार कर ही रहे थे कि सरकार 'ट्रेड-डिस्प्यूट बिल' लेकर सामने आई। हम इसी सम्बन्ध में असेम्बली की कार्यवाही देखने गए। वहां हमारा यह विश्वास और भी दृढ़ हो गया कि भारत की करोड़ों मेहनतकश जनता एक ऐसी संस्था से किसी बात की भी आशा नहीं कर सकती, जो भारत के बेबस मेहनतकशों की दासता तथा शोषकों की गलाघोंटू शक्ति की भयानक यादगार है।

अन्त में वह कानून, जिसे हम बर्बर एवं अमानवीय समझते हैं, देश के प्रतिनिधियों के सिरों पर पटक दिया गया और इस प्रकार करोड़ों संघर्षरत भूखे मजदूरों को प्राथमिक अधिकारों से भी वंचित कर दिया गया और उनके हाथों से उनकी आर्थिक मुक्ति का एक मात्र हथियार भी छीन लिया गया। जिस किसी ने भी कमरतोड़ परिश्रम करने वाले मूक मेहनतकशों की हालत पर हमारी तरह सोचा है, वह शायद स्थिर मन से यह सब नहीं देख सकेगा। बलि के बकरों की भांति शोषकों – और सबसे बड़ी शोषक स्वयं सरकार है – की बलिवेदी पर आए दिन होने वाली मजदूरों की इन मूक कुर्बानियों को देखकर जिस किसी का भी दिल रोता है वह अपनी आत्मा की चीत्कार की उपेक्षा नहीं कर सकता।

गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी समिति के भूतपूर्व सदस्य स्वर्गीय श्री एस.आर. दास ने अपने प्रसिद्ध पत्र में अपने पुत्र को लिखा था इंग्लैण्ड की स्वप्ननिद्रा भंग करने के लिए बम का उपयोग आवश्यक था। श्री दास के इन्हीं शब्दों को सामने रखकर हमने असेम्बली भवन में बम फेंके थे। हमने वह काम मेहनतकश जनता की तरफ से प्रतिरोध प्रदर्शित करने के लिए किया था जिसके पास अपनी मर्मान्तिक पीड़ा को व्यक्त करने का और कोई रास्ता ही नहीं था। **हमारा एक मात्र उद्देश्य था – 'बहरों को सुनाना' और पीड़ित जनता की मांगों पर ध्यान न देने वाली सरकार को समय रहते चेतावनी देना।**

हमारी ही तरह दूसरों की भी परोक्ष धारणा है कि प्रशान्त रूपी भारतीय मानवता की ऊपरी शान्ति किसी भी समय फूट पड़ने वाले एक भीषण तूफान की द्योतक है। हमने तो उन लोगों के लिए सिर्फ खतरे की घण्टी बजाई है जो आने वाले भयानक खतरे की परवाह किए बगैर तेज रफ्तार से आगे की तरफ भागे जा रहे हैं। हम लोगों को सिर्फ यह बता देना चाहते हैं कि 'काल्पनिक अहिंसा' का युग अब समाप्त हो चुका है और आज की उठती हुई नई पीढ़ी को उसकी व्यर्थता में किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं रह गया है।

मानवता के प्रति हार्दिक सद्भाव तथा अमिट प्रेम रखने के कारण, उसे व्यर्थ के रक्तपात से बचाने के लिए हमने चेतावनी देने के इस उपाय का सहारा लिया है। और उस आने वाले रक्तपात को हम ही नहीं, लाखों आदमी पहले ही देख रहे हैं।

काल्पनिक अहिंसा

ऊपर हमने 'काल्पनिक अहिंसा' शब्द का प्रयोग किया है। यहां पर उसकी व्याख्या कर देना भी आवश्यक है। आक्रामक उद्देश्य से जब बल का प्रयोग होता है तो उसे हिंसा कहते हैं, और नैतिक दृष्टिकोण से उचित नहीं कहा जा सकता। लेकिन जब उसका उपयोग किसी वैध आदर्श के लिए किया जाता है तो उसका नैतिक औचित्य भी होता है। 'किसी भी हालत में बल-प्रयोग नहीं होना चाहिए', यह विचार काल्पनिक और अव्यावहारिक है। इधर देश में जो नया आन्दोलन तेजी के साथ उठ रहा है, और जिस की पूर्व सूचना हम दे चुके हैं, वह गुरू गोबिन्दसिंह, शिवाजी, कमाल पाशा, रिजा खां, वाशिंगटन, गैरीबाल्डी, लाफायेट और लेनिन के आदर्शों से ही प्रस्फुटित है और उन्हीं के पद-चिन्हों पर चल रहा है। चूंकि भारत की विदेशी सरकार तथा हमारे राष्ट्रीय नेतागण, दोनों ही इस आन्दोलन की ओर से उदासीन लगते हैं और जान-बूझकर उसकी पुकार की ओर से अपने कान बन्द करने का प्रयत्न कर रहे हैं, अतः हमने अपना कर्तव्य समझा कि हम एक ऐसी चेतावनी दें, जिसकी अवहेलना न की जा सके।

हमारा अभिप्राय

अभी तक हमने इस घटना के मूल उद्देश्य पर ही प्रकाश डाला है। अब हम अपना अभिप्राय भी स्पष्ट कर देना चाहते हैं।

यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि इस घटना के सिलसिले में मामूली चोटें खाने वाले व्यक्तियों अथवा असेम्बली के किसी अन्य व्यक्ति के प्रति हमारे दिलों में कोई वैयक्तिक विद्वेष की भावना नहीं थी। इसके विपरीत हम एक बार फिर स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हम मानव-जीवन को अकथनीय पवित्रता प्रदान करते हैं और किसी अन्य व्यक्ति को चोट पहुंचाने के बजाए हम मानवजाति की सेवा में हंसते-हंसते अपने प्राण विसर्जित कर देंगे। **हम साम्राज्यवाद की सेना के भाड़े के सैनिकों जैसे नहीं हैं जिनका काम ही नर हत्या होता है। हम मानव-जीवन का आदर करते हैं और बराबर उसकी रक्षा का प्रयत्न करते हैं।** इसके बाद भी हम स्वीकार करते हैं कि हमने जान-बूझकर असेम्बली भवन में बम फेंके।

घटनाएं स्वयं हमारे अभिप्राय पर प्रकाश डालती हैं। और हमारे इरादों की परख हमारे काम के परिणाम के आधार पर होनी चाहिए न कि अटकलों एवं मनगढ़न्त परिस्थितियों के आधार पर। सरकारी विशेषज्ञ की गवाही के विरुद्ध हमें यह कहना है कि असेम्बली भवन में फेंके गए बमों से वहां की एक खाली बेंच को ही कुछ नुकसान पहुंचा और लगभग आधे दर्जन लोगों को मामूली-सी खरोंचें भर आईं। सरकारी वैज्ञानिकों ने कहा है कि बम बड़े जोरदार थे और उनसे अधिक नुकसान नहीं हुआ, इसे एक अनहोनी घटना ही कहना चाहिए। लेकिन हमारे विचार से उन्हें वैज्ञानिक ढंग से बनाया ही ऐसा गया था। पहले तो, दोनों बम बेंचों तथा डेस्कों के बीच की खाली जगह में ही गिरे थे। दूसरे, उनके फूटने की जगह से दो फुट पर बैठे हुए लोगों को भी, जिनमें मिस्टर पी.आर. राव, मिस्टर शंकर राव तथा सर जार्ज शुस्टर के नाम उल्लेखनीय हैं, या तो बिल्कुल ही चोटें नहीं आईं या नाम मात्र को मामूली चोटें आईं। अगर उन बमों में जोरदार पोटाशियम क्लोरेट और पिक्रिक एसिड भरा होता, जैसा कि सरकारी विशेषज्ञ ने कहा है, तो इन बमों ने उस लकड़ी के घेरे को तोड़कर कुछ गज की दूरी पर खड़े हुए लोगों तक को उड़ा दिया होता। और यदि उनमें कोई और भी शक्तिशाली विस्फोटक भरा जाता तो निश्चय ही वे असेम्बली के अधिकांश सदस्यों को उड़ा देने में समर्थ होते। यही नहीं, यदि हम चाहते तो उन्हें सरकारी कक्ष में फेंक सकते थे जो कि विशिष्ट व्यक्तियों से खचाखच भरा था। या फिर उस सर जान साइमन को अपना निशाना बना सकते थे, जिसके अभागे कमीशन ने प्रत्येक विचारशील व्यक्ति के दिल में उसके प्रति गहरी नफरत पैदा कर दी थी और जो उस समय असेम्बली की अध्यक्ष दीर्घा में बैठा था। लेकिन हमारा इस तरह का कोई इरादा नहीं था और उन बमों ने उतना ही काम किया जितने के लिए उन्हें तैयार किया गया था। यदि उससे कोई अनहोनी घटना हुई तो यही कि वे निशाने पर अर्थात् निरापद स्थान पर गिरे।

एक ऐतिहासिक सबक

इसके बाद हमने इस कार्य का दण्ड भोगने के लिए अपने आपको जान-बूझकर पुलिस के हाथों समर्पित कर दिया। हम साम्राज्यवादी शोषकों को यह बता देना चाहते थे कि मुट्ठी भर आदमियों को मारकर किसी आदर्श को समाप्त नहीं किया जा सकता और न ही दो नगण्य व्यक्तियों को कुचलकर राष्ट्र को दबाया जा सकता है। हम इतिहास के इस सबक पर जोर देना चाहते थे कि परिचय-पत्र या परिचय-चिन्ह (Letter de catchet) तथा वैस्टाइल

(फ्रांस की कुख्यात जेल, जहां राजनैतिक बन्दियों को घोर यन्त्रणाएं दी जाती थीं – अनु.) फ्रांस के क्रान्तिकारी आन्दोलन को कुचलने में समर्थ नहीं हुए थे, फांसी के फन्दे और साइबेरिया की खानें रूसी क्रान्ति की आग को बुझा नहीं पाई थीं। तो फिर क्या अध्यादेश और सेफ्टी बिल भारत में आजादी की लौ को बुझा सकेंगे? षडयंत्रों का पता लगाकर या गढ़े हुए षड़यंत्रों द्वारा नौजवानों को सजा देकर या एक महान आदर्श के स्वप्न से प्रेरित नवयुवकों को जेलों में ठूंसकर, क्या क्रान्ति का अभियान रोका जा सकता है? हां, सामयिक चेतावनी से, बशर्ते कि उसकी उपेक्षा न की जाए, लोगों की जानें बचाई जा सकती हैं और व्यर्थ की मुसीबतों से उनकी रक्षा की जा सकती है। आगाह करने का यह भार अपने ऊपर लेकर हमने अपना कर्तव्य पूरा किया है।

क्रान्ति क्या है?

भगत सिंह से नीचे की अदालत में पूछा गया था कि क्रान्ति से हम लोगों का क्या मतलब है? इस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा था – **"क्रान्ति के लिए खूनी लड़ाइयां अनिवार्य नहीं हैं और न ही उसमें व्यक्तिगत प्रतिहिंसा के लिए कोई स्थान है। वह बम और पिस्तौल का सम्प्रदाय नहीं है। क्रान्ति से हमारा अभिप्राय है – अन्याय पर आधारित मौजूदा समाज व्यवस्था में आमूल परिवर्तन।"**

समाज का प्रमुख अंग होते हुए भी आज मजदूरों को उनके प्राथमिक अधिकार से वंचित रखा जा रहा है। उनकी गाढ़ी कमाई का सारा धन शोषक पूंजीपति हड़प जाते हैं। दूसरों के अन्नदाता किसान आज अपने परिवार सहित दाने-दाने के लिए मुहताज है। दुनियाभर के बाजारों को कपड़ा मुहैया करवाने वाला बुनकर अपने तथा अपने बच्चों के तन ढकने-भर को भी कपड़ा नहीं पा रहा है। सुन्दर महलों का निर्माण करने वाले राजगीर, लोहार तथा बढ़ई स्वयं गन्दे बाड़ों में रहकर ही अपनी जीवन-लीला समाप्त कर जाते हैं। इसके विपरीत समाज की जोंकें – शोषक पूंजीपति – जरा-जरा सी बातों के लिए लाखों के वारे-न्यारे कर देते हैं।

यह भयानक असमानता और जबर्दस्ती लादा गया भेदभाव दुनिया को एक बहुत बड़ी उथल-पुथल की ओर लिए जा रहा है। यह स्थिति अधिक दिनों तक कायम नहीं रह सकती। स्पष्ट है कि आज का धनिक समाज एक भयानक ज्वालामुखी के मुंह पर बैठकर रंगरलियां मना रहा है और शोषकों के मासूम बच्चे और करोड़ों शोषित लोग एक भयानक खड्ड की कगार पर चल रहे हैं।

आमूल परिवर्तन की आवश्यकता

सभ्यता का यह प्रासाद यदि समय रहते संभाला न गया तो शीघ्र ही चरमराकर बैठ जाएगा। देश को एक आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। और जो लोग इस बात को महसूस करते हैं उनका कर्तव्य है कि साम्यवादी सिद्धान्तों पर समाज का पुनर्निर्माण करें। जब तक यह नहीं किया जाता और मनुष्य द्वारा मनुष्य का तथा एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र का शोषण, जो साम्राज्यशाही के नाम से विख्यात है, समाप्त नहीं कर दिया जाता तब तक मानवता को उसके क्लेशों से छुटकारा मिलना असम्भव है, और तब तक युद्धों को समाप्त कर विश्वशान्ति के युग का प्रादुर्भाव करने की सारी बातें महज ढोंग के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं हैं। क्रान्ति से हमारा मतलब अन्ततोगत्वा एक ऐसी समाज-व्यवस्था की स्थापना से है जो इस प्रकार के संकटों से बरी होगी और जिसमें सर्वहारा वर्ग का आधिपत्य सर्वमान्य होगा। और जिसके फलस्वरूप स्थापित होने वाला विश्व-संघ पीड़ित मानवता को पूंजीवाद के बन्धनों से और साम्राज्यवादी युद्ध की तबाही से छुटकारा दिलाने में समर्थ हो सकेगा।

सामयिक चेतावनी

यह है हमारा आदर्श। और इसी आदर्श से प्रेरणा लेकर हमने एक सही तथा पुरजोर चेतावनी दी है। लेकिन अगर हमारी इस चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया गया और वर्तमान शासन-व्यवस्था उठती हुई जनशक्ति के मार्ग में रोड़े अटकाने से बाज न आई तो क्रान्ति के इस आदर्श की पूर्ति के लिए एक भयंकर युद्ध का छिड़ना अनिवार्य है। सभी बाधाओं को रौंदकर आगे बढ़ते हुए उस युद्ध के फलस्वरूप सर्वहारा वर्ग के अधिनायकतत्व की स्थापना होगी। यह अधिनायकतत्व क्रान्ति के आदर्शों की पूर्ति के लिए मार्ग प्रशस्त करेगा। क्रान्ति मानवजाति का जन्मजात अधिकार है, जिसका अपहरण नहीं किया जा सकता। स्वतन्त्रता प्रत्येक मनुष्य क जन्मसिद्ध अधिकार है। श्रमिक वर्ग ही समाज का वास्तविक पोषक है, जनता की सर्वोपरि सत्ता की स्थापना श्रमिक वर्ग का अन्तिम लक्ष्य है। इन आदर्शों के लिए और इस विश्वास के लिए हमें जो भी दण्ड दिया जाएगा, हम उसका सहर्ष स्वागत करेंगे। क्रान्ति की इस पूजा-वेदी पर हम अपना जीवन नैवेद्य के रूप में लाए हैं, क्योंकि ऐसे महान आदर्श के लिए बड़े-से-बड़ा त्याग भी कम है। हम सन्तुष्ट हैं और क्रान्ति के आगमन की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे हैं।

इन्कलाब जिन्दाबाद !

21 जनवरी - मार्क्सवाद के महान शिक्षक कॉमरेड लेनिन को 81वीं बरसी पर श्रद्धांजली !

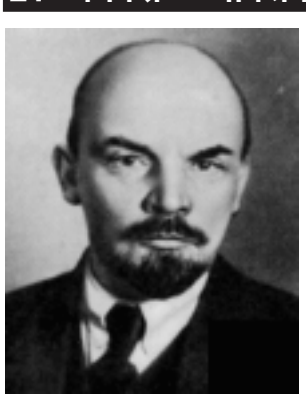

"आज लेनिन दिवस पर हम उन सब को हार्दिक बधाई भेजते हैं जो महान लेनिन के विचारों को आगे बढ़ाने में कुछ भी योगदान दे रहे हैं। हम रूस द्वारा किए जा रहे महान प्रयोग की सफलता की कामना करते हैं। हम अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर वर्ग के आन्दोलन की आवाज़ में अपनी आवाज़ मिलाते हैं। सर्वहारा की विजय सुनिश्चित है। पूंजीवाद पराजित होगा।

साम्राज्यवाद मुर्दाबाद !"

– 21 जनवरी 1930 को कॉमरेड लेनिन की बरसी के मौके पर भगत सिंह और उनके साथियों द्वारा अदालत के जरिए तीसरे इन्टरनेशनल को भेजा तार

कॉमरेड साकेत राजन (सुरेश) की बहादुराना शहादत को लाल सलाम !

6 फरवरी 2005 के दिन भारत के क्रान्तिकारी आन्दोलन, खासकर कर्नाटक राज्य के क्रान्तिकारी आन्दोलन ने एक महत्वपूर्ण नेता खोया। उस दिन कर्नाटक पुलिस ने कॉमरेड साकेत राजन, जो भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के कर्नाटक राज्य कमेटी सचिव थे, की हत्या करके खुशियां मनाईं। दूसरी तरफ देश के तमाम क्रान्तिकारी कतारों और कर्नाटक राज्य के उत्पीड़ित अवाम में इस दुःखद खबर सुनकर शोक फैल गया। करीब ढाई दशकों से जारी उनकी क्रान्तिकारी संघर्ष-यात्रा अचानक इस प्रकार थम जाने से क्रान्तिकारी आन्दोलन को काफी नुकसान हुआ है। तमाम उत्पीड़ित जनता और कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी उनके अधूरे मकसद को पूरा करने उनके आदर्शों से प्रेरणा लेने की कसम खाकर कदम बढ़ाते हुए चल पड़े हैं। आज जबकि हमारी धरती पर भारत की क्रान्ति की दो धाराओं के विलय के बाद भाकपा (माओवादी) के नाम से एक विशाल माओवादी धारा का जन्म हुआ है, जिससे तमाम शोषक-लुटेरे डर से कांप रहे हैं और उत्पीड़ित अवाम खुशियां मना रहा है, ऐसे में कॉमरेड साकेत राजन की हत्या हमें निश्चित रूप से टीसती रहेगी। कॉमरेड साकेत राजन की शहादत सदा याद की जाएगी। इस मौके पर हमारी दण्डकारण्य स्पेशल जोनल कमेटी विनम्रता से सर झुकाकर इस साहसिक नेता को श्रद्धांजली अर्पित करती है और उनके शोकसंतप्त परिवार जनों और कर्नाटक की जनता के दुःख को बांट लेती है। आइए, इस लोक नायक की जीवन-यात्रा का संक्षिप्त जायजा लें –

जनता और पार्टी की कतारों में कॉमरेड सुरेश और कॉमरेड प्रेम कुमार के नाम से लोकप्रिय कॉमरेड साकेत राजन सन् 1982 में कर्नाटक में हमारी पार्टी के सम्पर्क में आए थे। उस समय वह विवेकानन्द मिशन स्वयंसेवी संगठन से जुड़े हुए थे और उसमें रहकर उन्होंने मैसूर जिले के महदेश्वरा पहाड़ी इलाके में आदिवासियों के बीच काम किया था। वह कर्नाटक राज्य के दलित संगठनों के संपर्क में भी थे। तब वह बंगलूर विश्वविद्यालय में मास कम्युनिकेशन्स की पढ़ाई कर रहे थे। उसके पहले वह दिल्ली के जवहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में पत्रकारिता की पढ़ाई कर चुके थे।

पार्टी की लाइन से वह सहमत हो गए थे और पार्टी सदस्य बन गए। 1983 तक पेशेवर क्रान्तिकारी बनने तैयार हो गए। शुरू में उन्होंने बंगलूर और मैसूर शहरों में छात्रों के बीच काम किया था। मैसूर उनकी गृहनगरी थी। 1985 में हैदराबाद में आयोजित अखिल भारतीय क्रान्तिकारी छात्र संघ (एआइआरएसएफ) के पहले अधिवेशन में वह कार्यकारिणी सदस्य चुने गए थे। बाद में उन्होंने उस संघ का मुखपत्र – 'कलम' के कार्यकारी सम्पादक के रूप में अच्छा काम किया। पुरानी पीपुल्सवार पार्टी में 1985-87 के बीच उत्पन्न पहले आंतरिक संकट में वह क्रान्तिकारी पक्ष में दृढ़ता से खड़े रहे थे। 1987 में कर्नाटक में सम्पन्न पार्टी के राज्य अधिवेशन में चुनी गई पांच सदस्यीय राज्य कमेटी में वह एक थे। 1987-2000 तक कॉमरेड साकेत ने राज्य कमेटी सदस्य के रूप में काम किया और वर्ष 2000 में सम्पन्न राज्य अधिवेशन में वह राज्य कमेटी सचिव चुन लिए गए। 2001 में सम्पन्न पुरानी सीपीआई (एम-एल) [पीपुल्सवार] की 9वीं कांग्रेस में कॉमरेड साकेत राजन को केन्द्रीय कमेटी के वैकल्पिक सदस्य चुन लिया गया।

9वीं कांग्रेस में कॉमरेड साकेत ने कर्नाटक में काम का लक्ष्यित इलाका हैदराबाद-कर्नाटक इलाके से मलनाड (पश्चिमी पर्वतशृंखला) इलाके में बदलने का प्रस्ताव रखा था। तब तक ग्रामीण काम पूरा रायचूर इलाके में सीमित था, जो कि एक मैदानी इलाका था। वहां सामन्ती दबदबा मजबूत था और सामाजिक अन्तरविरोध तीखे थे। पुरानी पीपुल्सवार पार्टी की अगुवाई में जारी समूचे आन्दोलन की समीक्षा और केन्द्रीय राजनीतिक व सांगठनिक समीक्षा में दी गई दिशा को ध्यान में रखकर मलनाड के रणनीतिक इलाके में काम शुरू करने का प्रस्ताव रखा गया था। जब कांग्रेस के बाद केन्द्रीय कमेटी की विस्तृत बैठक के दौरान कॉमरेड साकेत से काम की योजना पेश करने को कहा गया था तो उन्होंने 18 महीनों की योजना बनाकर पेश की। केन्द्रीय कमेटी की विस्तृत बैठक ने रायचूर इलाके से हमारी ताकतों को हटाने पर मोटे तौर पर सहमति दी। और पश्चिमी पर्वतीय इलाके को एक और लक्ष्यित इलाके में विकसित करने का प्रस्ताव किया।

इसके मुताबिक कॉमरेड साकेत की अगुवाई में कर्नाटक राज्य कमेटी ने मलनाड इलाके में शुरूआती सर्वेक्षण और सामाजिक जांच पूरी करके 2001 के बीच हथियारबन्द दस्तों का गठन शुरू किया। समूची पार्टी को इस नए कार्यभार में लगाना बड़ा कठिन काम था। इस दौरान कुछ दक्षिणपंथी गलत रुझान भी पार्टी में सामने आए थे। कॉमरेड साकेत ने उन गलत रुझानों के खिलाफ दृढ़तापूर्वक संघर्ष किया। मलनाड इलाके में वर्ग संघर्ष को आगे बढ़ाने में वह आगे खड़े थे और सदा प्रेरणा के स्रोत रहे। 2002 में जब गलत रुझान पनपे थे तब उन्होंने मलनाड में आन्दोलन का संचालन करने में अहम भूमिका निभाई।

हालांकि कॉमरेड साकेत का जन्म एक उच्च मध्यम वर्गीय परिवार में हुआ था, लेकिन उन्होंने शुरू से ही हर प्रकार का कठिन काम अपने कंधों पर उठाते हुए तथा गैर-सर्वहारा वर्गीय रुझानों व कमजोरियों को दूर करते हुए खुद को सर्वहारा में तब्दील करने के लिए चेतनापूर्वक प्रयास किए। 1983 में जब वह पार्टी में शामिल हुए थे तब वह अपने साथ पढ़ाई कर रही एक महिला से शादी करने का फैसला ले चुके थे। लेकिन चूंकि वह कठिन जिन्दगी जीने तैयार नहीं हुई थीं और एक पेशेवर क्रान्तिकारी के रूप में जरूरत पड़ने पर भूमिगत होने तैयार नहीं थीं, तो उन्होंने शादी का विचार त्याग दिया क्योंकि वह क्रान्ति के लक्ष्य के प्रति प्रतिबद्ध थे। तब तक उनके बीच इतना घनिष्ठ सम्बन्ध था, उसे देखते हुए वह कॉमरेड साकेत के लिए बहुत मुश्किल फैसला था। लेकिन कॉमरेड साकेत ने अपने व्यक्तिगत हितों के मुकाबले राजनीति को तथा जनता के हितों को सर्वोपरि रखा। दस वर्ष बाद ही उन्होंने कॉमरेड राजेश्वरी से शादी की थी जो तब तक पार्टी सदस्या बन चुकी थीं जिन्हें उन्होंने एक अच्छी कम्युनिस्ट बनने का लगातार प्रोत्साहन दिया था। कॉमरेड राजेश्वरी ने अपनी सरकारी नौकरी छोड़ दी और पेशेवर क्रान्तिकारी बन गईं। कॉमरेड राजेश्वरी 'कन्नड' पत्रिका की सम्पादक के तौर पर फरवरी-मार्च 2001 में आन्दोलन का अध्ययन करने और सीखने के

(शेष पृष्ठ 26 पर....)

छत्तीसगढ़ औद्योगिक नीति (2004-09)

साम्राज्यवादियों को संसाधन लुटा देने की साजिश

छत्तीसगढ़ में सत्तारूढ़ भाजपा सरकार ने हाल ही में अपनी औद्योगिक नीति घोषित की। आगामी पांच साल तक लागू रहने वाली इस औद्योगिक नीति का असली मकसद है, राज्य की संपादाओं एवं संसाधनों को खासकर, आदिवासी इलाकों के वन एवं खनिज संसाधनों को देश के दलाल बड़े पूंजीपतियों एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हवाले करना। इस नीति में सरकार ने जनता को हर तरह से लूटने एवं पूंजीपतियों को हर तरह की छूट देने की व्यवस्था कर रखी है। भाजपा सरकार की यह नीति इसकी पूर्ववर्ती कांग्रेस सरकार की नीति से कतई अलग नहीं है। बल्कि यह पूंजीपतियों को छूट देने में चार कदम आगे ही है।

यह औद्योगिक नीति दरअसल उद्योग संघों, उद्योगपतियों, बैंको, वित्तीय संस्थानों के प्रतिनिधियों तथा वित्तीय विशेषज्ञों के साथ विचार-विमर्श करने के बाद, उनके सुझावों तथा विचारों को महत्व देते हुए बनायी गयी है। यह बात औद्योगिक नीति में ही कही गयी है।

घोषित उद्देश्य एवं परदे के पीछे की सच्चाई

अपनी औद्योगिक नीति में सरकार ने यह घोषित किया कि राज्य में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध खनिज एवं वन संसाधनों का उपयोग करके राज्य में औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने हेतु उद्योगों को आकर्षित करना एवं पूंजी निवेश के लिए अनुकूल वातावरण निर्मित करना उसका उद्देश्य है। यहां अनुकूल वातावरण का मतलब है पूंजीपतियों के लिए सुविधाजनक वातावरण तैयार करना।

राज्य में औद्योगीकरण को बढ़ावा देने के लिए निजी क्षेत्र की भागीदारी एवं विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को प्रोत्साहित करने का निर्णय सरकार ने लिया। इसका मतलब है देश के बड़े पूंजीपतियों एवं विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों को विशेष सुविधाएं उपलब्ध कराना।

अपनी औद्योगिक नीति में बंद बीमार उद्योगों के पुनर्वास की बात सरकार ने की लेकिन उसके लिए अपनाये जाने वाले ठोस कदम के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है।

औद्योगीकरण के जरिए बेरोजगारी को दूर करने हेतु रोजगार के अधिकाधिक अवसर प्रदान करने की बात सरकार कह रही है। लेकिन जिन उद्योगों को प्रोत्साहन देने की बात कर रही है, या जिन उद्योगों को सरकारी संरक्षण प्राप्त है, वे सभी आधुनिक एवं यंत्रीकृत हैं। इसलिए रोजगार के अवसर बहुत ही कम हैं। खदानों में भी मशीनीकरण के चलते बड़े-बड़े मशीन लगेंगे एवं कम-से-कम लोगों को काम मिलने की संभावना है।

अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति आदि कमजोर वर्गों के पूंजीपतियों की विकास की प्रक्रिया में भागीदारी सुनिश्चित करने के घोषित उद्देश्य के पीछे की सच्चाई साफ है कि सरकार अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के लोगों को नहीं बल्कि उन वर्गों में मौजूद एक या दो पूंजीपतियों को विशेष सुविधाएं देगी। अनुसूचित जातियों व जनजातियों के एकाध पूंजीपतियों के विकास से उन वर्गों की जनता को कोई फायदा नहीं होने वाला है।

राज्य के पिछड़े क्षेत्रों में उद्योगों को आकर्षित करने, वहां पूंजीनिवेश करने वालों को विशेष आर्थिक सहयोग एवं प्रोत्साहन देने की घोषणा सरकार ने की। उत्तर बस्तर (कांकेर), बस्तर, दक्षिण बस्तर (दंतेवाड़ा), सरगुजा, कोरिया तथा जशपुर जिलों को अति पिछड़े अनुसूचित जनजाति बाहुल्य क्षेत्र की श्रेणी में रखा गया है एवं इन क्षेत्रों मे उद्योग लगाने वाले पूंजीपतियों को अत्यधिक सुविधाएं देने का प्रावधान किया गया है। यानी आदिवासी इलाकों और वन क्षेत्रों के वन एवं खनिज संसाधानों को लुटाने की नीति को ही पिछड़े क्षेत्रों के विकास का रूप दिया गया है। राज्य के बाकी जिलों को सामान्य क्षेत्र में रखा गया है। इसका मतलब यह नहीं कि इन जिलों में उद्योग लगाने वाले पूंजीपतियों को कोई आर्थिक सहायता नहीं मिलेगी। फर्क सिर्फ इतना ही है कि इन इलाकों में पूंजी लगाने वालों को कम सहायता मिलेगी। यह कम, ज्यादा का फर्क भी बहुत कम ही है।

हर प्रकार की सुविधा उपलब्ध कराने की रणनीति

सरकार ने औद्योगिक नीति में पूंजीपतियों को हर प्रकार की सुविधा उपलब्ध कराने की रणनीति बनाई जिसके तहत उद्योगों के लिए आवश्यक रेल-सड़क, विद्युत, पानी आदि मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध करायेगी।

उद्योगों को उच्च गुणवत्ता वाली विद्युत बिना कटौती उपलब्ध कराने की घोषणा की। सड़क, विकसित भूमि, पानी को कम समय में और अच्छी गुणवत्ता के साथ उपलब्ध कराने निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित करेगी। यानी जनता के पैसों से सभी सुविधाएं उपलब्ध करायेगी, वह भी निजी ठेकेदारों या उद्योगपतियों के जरिए।

उद्योगों को पानी पहुंचाने राज्य की जीवनदायी नदियों पर एनीकट श्रृंखलाओं का निर्माण करेगी, वह भी समयबद्ध कार्यक्रम के तहत। दल्ली-रावघाट-जगदलपुर रेल लाइन का निर्माण जल्द से जल्द करायेगी।

रेल लाइन के लिए हाल ही में राज्य सरकार, रेल मंत्रालय एवं भिलाई इस्पात संयत्र के बीच समझौता भी हो गया है। 1000 करोड़ रूपये की लागत से यह रेल लाइन उद्योगपतियों को बस्तर में लगने वाले अपने उद्योगों से माल ढुलाई तथा कच्चामाल बाहर ले जाने हेतु बिछाया जा रहा है। वर्तमान में मौजूद तथा भविष्य में निर्मित किये जाने वाले औद्योगिक क्षेत्रों, औद्योगिक पार्कों, निर्यात क्षेत्रों आदि को राष्ट्रीय राजमार्गों, महत्वपूर्ण रेल्वे स्टेशनों से, उत्कृष्ट सड़कों से जोड़ा जायेगा।

औद्योगिक इकाइयों के तकनीकी उन्नयन तथा आधुनिकीकरण के लिए उद्योगपतियों को प्रोत्साहित करने की सरकारी नीति से साफ जाहिर है कि वह रोजगार के अवसर बढ़ाने का ढोंग कर रही है। मशीनीकरण, कम्प्यूटरीकरण के लिए एक ओर पूंजीपतियों को विशेष आर्थिक प्रोत्साहन ओर दूसरी ओर रोजगार के अधिक अवसर पैदा करने का सफेद झूठ।

राज्य से निर्यात को बढ़ावा देने के लिए विशेष आर्थिक प्रक्षेत्र (SEZ), कृषि निर्यात प्रक्षेत्र, एयर कार्गो कांप्लेक्स, तथा इनलैंड

कंटेनर डिपो का निर्माण करना एवं समस्त सुविधाएं उपलब्ध करायेगी।

पानी, बिजली, सड़क, रेल आदि बुनियादी सुविधाओं को देशी तथा विदेशी - दोनों प्रकार के निजी भागीदारी के द्वारा निर्मित करने एवं उन्हें विशेष प्रोत्साहन देने की घोषणा के पीछे की सच्चाई के बारे में अलग से बताने की जरूरत नहीं है। यह सब कुछ सरकारी पैसे यानी जनता के पैसे से किया जायेगा। या बी.ओ.ओ.टी (बिल्ड, ओन, आपरेट, एण्ड ट्रांसफर) की पद्धति से निर्मित की जायेगी। यानी पूंजीपति अपने पैसे से निर्मित करेगा, निश्चित समयावधि तक टैक्स वसूल करके लागत (कई गुणा अधिक) की भरपाई करके फिर सरकार को दखल करेगा। पुल आदि के निर्माण के बाद इसे पार करने वाले वाहनों से 10 साल तक टोल टैक्स वसूलने का अधिकार दिया जाता है।

औद्योगिक अधोसंरचनात्मक सुविधाएं

इंडस्ट्रियल जोनिंग एट्लस तैयार करेगी। प्रत्येक जिला मुख्यालय के समीप औद्योगिक क्षेत्रों का निर्माण किया जायेगा। हर्बल पार्क, फुड पार्क, एल्यूमिनियम पार्क, मेटल पार्क, आई टी पार्क, साइकल कांप्लेक्स, जेम एण्ड जेवेलरी पार्कों का निर्माण करेगी। इनके अलावा निजी औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना को प्रोत्साहित करेगी। वर्तमान में मौजूद औद्योगिक क्षेत्रों के लिए आवश्यक पानी, सड़क, बिजली आदि सुविधाएं सरकार स्वयं के खर्च पर करेगी। यानी जनता के पैसे से। एस.ई.जेड., ए.ई.जेड. तथा तमाम औद्योगिक क्षेत्रों के लिए शासकीय तथा निजी भूमि अधिग्रहित करके छत्तीसगढ़ राज्य औद्योगिक विकास निगम के जरिए पूंजीपतियों को उपलब्ध करायेगी। यह दरअसल औद्योगिक विकास निगम नहीं, बल्कि पूंजीपति विकास निगम है।

औद्योगिक क्षेत्रों के निर्माण का मतलब है, जमीन, शेड, सड़क, पानी, बिजली, बैंक, डाक-तार एवं संचार तंत्र, थाना आदि सब कुछ तैयार करके पूंजीपतियों को सौम्पना। औद्योगिक क्षेत्रों के नजदीक सरकारी एवं निजी एजेंसियों के माध्यम से आवसीय सुविधाएं उपलब्ध कराने की भी सरकार व्यवस्था करेगी। यहां यह याद रखना होगा कि ये आवास मजदूरों के लिए नहीं बल्कि पूंजीपतियों के उच्च श्रेणी के सेवकों के लिए ही होंगे।

पूंजीपतियों के लिए कोई लाल फीताशाही नहीं !

वैसे सरकारी काम बहुत धीमी गति से होती है। लेकिन यह आम जनता के लिए लागू होता है। वह भी हर टेबल के पास घूस देते हुए चप्पल घिसते तक दफ्तरों का चक्कर काटने के बाद भी किसी आम आदमी का कोई काम होता है या फाइल आगे बढ़ता है। लेकिन औद्योगिक नीति में सरकार ने स्पष्ट किया है कि पूंजीपतियों के लिए कोई लालफीताशाही नहीं चलेगी। पूंजीपतियों के लिए आवश्यक सुविधाएं, सेवाएं तथा कानूनी क्लियरेंस आसानी से, कम समय में उपलब्ध कराने के लिए 'एकल संपर्क बिंदु' (सिंगल विंडो) यानी सब काम एक ही जगह में पूरा करने की व्यवस्था की गयी। देखिये, सरकार आम आदमी और पूंजीपतियों के बीच कितनी 'समानता' दर्शा रही है।

इतना ही नहीं, बल्कि पूंजीपतियों के कामकाज से संबंधित सभी एजेंसियों को एक स्थान पर - रायपुर में उद्योग परिसर का निर्माण करेगी। साथ-साथ पूंजी निवेश को बढ़ावा देने के लिए अनुकूल वातावरण निर्मित करने औद्योगिक संगठनों, निवेशकों, तथा विशेषज्ञों से विचार-विमर्श तथा संस्थागत व्यवस्था बनाने के लिए मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में एक राज्य स्तरीय उद्योग सलाहकार बोर्ड का गठन करने की सरकार ने व्यवस्था की। यानी पूंजीपतियों की सेवा में मुख्यमंत्री स्वयं हमेशा हाजिर रहेंगे।

पूंजी निवेश को बढ़ावा देने हेतु गठित जिला निवेश प्रोत्साहन समिति, राज्य निवेश प्रोत्साहन समिति को सुचारू ढंग से काम कराने के लिए डीम्ड अप्रूवल की व्यवस्था की गयी। यानी निश्चित समय के भीतर किसी पूंजीपति को फाइल-योजना पर सरकारी दफ्तर का कोई कार्य नहीं होता है तो उस समय सीमा के बाद उसे मंजूरी दी गयी माना जायेगा।

सबसे ऊपर जिला नोडल एजेंसी गठित किया जायेगा। यानी गैर सरकारी व्यक्तियों को नामजद करके इसे बनायेंगे और यह समस्त क्लियरेस देने के लिए उत्तरदायी होगी। वाह री सरकार ! पूंजीपतियों के काम के लिए कोई सरकार भी नहीं। औद्योगिक नीति के क्रियान्वयन के लिए उच्चाधिकार प्राप्त अंतरविचारणीय समिति का भी सरकार गठन करेगी।

लघु एवं ग्रामीण उद्योग 'ऊपरवाले' के भरोसे !

लघु एवं ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहन के नाम पर कुछ विशेष नहीं है। आर्थिक प्रोत्साहन के मामले में भी इन्हें सबसे कम सहायता का प्रावधान है। असल बात तो यह है कि सरकार ने वास्तविक लघु व ग्रामीण उद्योगों को छूट देने से साफ इंकार किया और सिर्फ मशीनीकृत तथा पैकेज्ड लघु उद्योगों के लिए ही आर्थिक सहायता देने की घोषणा की। जबकि कइयों कुटीर उद्योग-धंधे चला रहे हैं। इन सभी को स्वयं के नसीब पर छोड़ा गया है यानी इनको ध्वस्त करने की साजिश है।

बिस्कुट तथा बेकरी प्रोडक्ट, मिठाई निर्माण, गजक एवं रेवडियां, नमकीन निर्माण, खाने के नमक का शुद्धीकरण, मसाला-मिर्च पिसाई, पापड़ बनाना, फ्लोर मिल, हालर मिल, बुक बाइंडिंग, लिफाफा निर्माण, पेपर बैग्स, आरा मिल, क्लाथ-पेपर प्रिन्टिग प्रेस , ईंट निर्माण, लेमिनेशन, इलेक्ट्रिक्ल जॉब वर्क, लाइम पावडर, खनिज पावडर बनाना, सोडा, मिनरल, डिस्टिल्ड वाटर, पान मसाला, सुपारी, तंबाकु, आतिशबाजी, पटाखा निर्माण रिपेरिंग, फोटो लेबरेटरीज, साबून, फोटो कापीइंग, बारदान मरम्मत, पालिथीन बैग्स, आदि उद्योग-धंधों को छूट-रियायतों से पूरी तरह वंचित किया गया है इससे सरकार की रुझान साफ होती है।

मानव संसाधन विकास के नाम पर भी निजीकरण को महत्व

हम सब यह जानते हैं कि **पूंजीवाद आदमी को भी संसाधन मानता है। स्वाभाविक है श्रमशक्ति जब माल बन जाता है, तो उसके उत्पादक 'संसाधन' ही है। पूंजीपतियों की नजर में आदमी उसके फैक्टरी में काम आने वाले कच्चा माल से ज्यादा कुछ नहीं है।** उच्च गुणवत्ता वाले कच्चा माल से अच्छा माल बनता है। उसी तरह आदमी को भी उच्चगुणवत्ता वाला बनाने के लिए उसे कुशल बनाना चाहिए। इसीलिए उसे आई.टी.आई. वाली टेकनिक, इंजिनीयरिंग आदि की पढ़ाई करानी चाहिए। हमारी सरकार आदमी को कुशल बनाने के लिए ये सारी पढ़ाईयां मुफ्त में उपलब्ध कराने भी तैयार

नहीं है। इस काम के लिए भी वह पूंजीपतियों को निजी प्रशिक्षण संस्थान खोलने का प्रोत्साहन दे रही है। आम आदमी को जीने के लिए श्रम शक्ति बेचना है। कुशल बनेगा तभी श्रम शक्ति बेचने का मौका मिलेगा। कुशल बनने के लिए भी पैसा खर्च करना पड़ेगा अन्यथा अकुशल कहकर दरकिनार कर दिया जायेगा। कुल मिलाकर कहने का आशय यह है कि मानव संसाधन विकास के नाम पर भी पूंजीपतियों को निजी शिक्षण संस्थान खोलने की अनुमति दे रही है।

आम जनता की लूट - पूंजीपतियों को छूट

अपनी औद्योगिक नीति में सरकार में पूंजीपतियों के लिए दी जाने वाली छूट के बारे में ठोस प्रावधान कर रखा है। पूंजीपतियों को ब्याज अनुदान, स्थायी पूंजी निवेश अनुदान, विद्युत शुल्क छूट, स्टाम्प शुल्क छूट, प्रवेश कर छूट, परियोजना प्रतिवेदन व्यय तथा पौद्योगिकी प्रोन्नति हेतु ब्याज अनुदान आदि मदों में ठोस प्रोत्साहन दिया गया है।

आर्थिक प्रोत्साहन देने के मामले में सरकार ने निवेशकों को तीन श्रेणियों में बांट दिया है – अनुसूचित जाति-जनजाति वर्ग , आप्रवासी भारतीय तथा शत प्रतिशत विदेशी प्रत्यक्ष निवेशक तथा सामान्य वर्ग के निवेशक। छूट तो तीनों को दी गयी लेकिन सबसे ज्यादा विदेशी निवेशकों को। अनुसूचित जाति - जनजाति के निवेशकों को ज्यादा छूट का कोई मतलब इसलिए नहीं है कि ये एकाध (बहुत कम) ही होंगे। वो भी पूंजीपतियों में ही शामिल हैं।

उद्योगों के साइज के हिसाब से भी छूट प्राप्त करने वाले उद्योगों को लघु, मध्यम-वृहत उद्योग तथा मेगा प्रोजेक्ट्स में विभाजित किया गया है। लघु उद्योगों को छोड़कर 100 करोड़ की पूंजी वाले उद्योगों को मध्यम-वृहत श्रेणी में तथा 100 से 1000 करोड़ तक की पूंजी वाले उद्योगों को मेगा श्रेणी में तथा 1000 से अधिक पूंजी वाले उद्योगों को वृहत श्रेणी में रखा गया है। छूट के मामले में आदिवासी इलाकों में लगने वाले वृहत, मेगा उद्योगों को सबसे ज्यादा छूट दी गयी है। इसलिए नीचे छूट के विवरण देते समय कम और ज्यादा का अंतर दिया गया है। यही अंतर उद्योगों एवं निवेशकों के वर्गीकरण के लिए लागू होता है।

उद्योगों के स्वभाव के मुताबिक भी वर्गीकरण किया गया है। गौर करने वाली बात यह है कि वन एवं खनिज संसाधनों पर आधारित उद्योगों तथा इलेक्ट्रानिक्स आदि आधुनिक उद्योगों को 'विशेष थ्रस्ट उद्योग' की श्रेणी में रखकर सबसे ज्यादा छूट दी गयी है। जैसा कि हर्बल उद्योग, आटोमोबाइल, आदि।

छूट और रियायतों का मकडजाल

5 से 7 वर्ष तक कुल भुगतान किये गये ब्याज का 10 से 75 प्रतिशत तक का या अधिकतम 10 से 30 लाख तक का अनुदान दिया जायेगा।

अधोसंरचना लागत/स्थायी पूंजी निवेश को 25 से 35 प्रतिशत की छूट दी जायेगी।

विद्युत शुल्कों में 10 से 15 वर्ष तक की पूर्ण छूट दी जायेगी।

भूमिशेड तथा भवनों के क्रय लीज, ऋण तथा अग्रिम से संबंधित विलेखों के निष्पादन पर पंजीयन से 3 साल तक स्टाम्प शुल्क में छूट दी जायेगी।

5 से 9 वर्ष तक प्रवेश कर से छूट दी जायेगी।

औद्योगिक क्षेत्रों में भूआबंटन पर, भू-प्रीमियम में 50 से 100 प्रतिशत तक की छूट दी जायेगी।

इसी तरह कई अन्य मदों में छूट गयी है। इससे अंदाजा लगा सकते हैं कि सरकार पूंजीपतियों को किस हद तक छूट दे रही है।

विदेशी पूंजी निवेश को विशेष छूट

आप्रवासी भारतीय तथा शत प्रतिशत विदेशी पूंजी निवेश वाले निवेशकों को संबंधित क्षेत्र में सामान्य निवेशकों को उपलब्ध होने वाले ठोस प्रोत्साहन से 5 प्रतिशत अधिक ठोस प्रोत्साहन दिया गया है। इससे सरकार का विदेशी पूंजीपति प्रेम जग जाहिर होता है।

सार्वजनिक उपक्रम के सर्वनाश की तैयारी

अपनी औद्योगिक नीति में सरकार ने साफ घोषणा की कि वह भारत शासन अथवा किसी राज्य शासन के सार्वजनिक उपक्रम को ठोस प्रोत्साहन की छूट-रियायत नहीं देगी। जबकि निजी कंपनी के साथ वाले संयुक्त उपक्रम को छूट मिलेगी। निजी उद्योगों को खुली छूट और सार्वजनिक उद्योगों की लूट का मतलब है सार्वजनिक उद्योगों को कंगाल करना, घाटे में पहुंचाना फिर कौडियों के भाव पूंजीपतियों, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के झोले में डालना। यानी सार्वजनिक उपक्रमों का सर्वनाश जन संपत्ती की दिन-दहाड़े व खुलेआम लूट।

श्रम कानूनों में सरलीकरण - मजदुरों के शोषण में इजाका

औद्योगिक नीति में सरकार ने यह घोषित किया कि वह श्रम कानूनों को और सरल बनायेगी। वैसे पिछली सरकार ने श्रमिकों के हकों पर कुठाराघात करने वाले कई निर्णय लिया था। एक तो मौजूदा श्रम कानून निजी क्षेत्र के उद्योगों में लागू होते नहीं है। श्रम विभाग उन्हें लागू करवाने का प्रयास भी नहीं करता है। ऊपर से अब सरकार की घोषणा का मतलब है - श्रमिकों के शोषण में बेरोकटोक इजाफा। और कोई कानूनी प्रावधान भी नहीं होगा, उनके शोषण के खिलाफ आवाज उठाने का। मजदूरों को पूरी तरह पूंजीपतियों के रहमोकरम पर छोड़ने की व्यवस्था कर दी है, सरकार ने।

औद्योगिक नीति का असली मकसद

दरअसल यह औद्योगिक नीति उदारीकरण, निजीकरण, वैश्वीकरण की नीतियों के अनुरूप बनायी गयी है। साम्राज्यवादियों के हितों के अनुरूप उन्हीं की देख-रेख में बनायी गयी केंद्रीय आर्थिक नीतियों के अनुरूप ही राज्य सरकार ने यह नीति बनायी। राज्य के खासकर वनांचलों के वन एवं खनिज संसाधनों को देशी दलाल बड़े पूंजीपतियों एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हवाले करने की नीति के तहत ही यह औद्योगिक नीति बनायी गयी है। दरअसल हमारे शासन ही दलाल बड़े पूंजीपति वर्ग एवं सामंती वर्ग का है जो साम्राज्यवाद के साथ सांठ गांठ किये हुए हैं। सरकार में बैठे लोग उन्हीं के प्रतिनिधि हैं। तथाकथित आजादी के बाद से लेकर अब तक 'कल्याणकारी सरकार' उन्ही वर्गों के कल्याण के लिए नीतियां बनाती रही है।

साम्राज्यवादी, सामंतवादी एवं दलाल पूंजीपति वर्गों की तिकड़ी की राजसत्ता को ध्वस्त करके और जनता की जनवादी राजसत्ता को स्थापित करके ही जन हितकारी नीतियों को बना सकते हैं। ★

देश के कोने-कोने में लोकयुद्ध को फैलाओ !

जन मुक्ति सेना और आधार इलाकों के निर्माण की ओर दृढ़ता से कदम बढ़ाओ !!

नई पार्टी भाकपा (माओवादी) के गठन मौके पर समूचे दण्डकारण्य में गूंज उठा नारा

दो पार्टियों – भाकपा (मा-ले) [पीपुल्सवार] और एमसीसीआई का विलय और भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के नाम से देश में एकीकृत सर्वहारा पार्टी के गठन के मौके पर समूचे दण्डकारण्य में जश्न जैसा माहौल बन गया। जगह-जगह पर पोस्टर, बैनर लगा दिए गए और बड़े पैमाने पर जनता में पर्चे बांटे गए। दरअसल देश की तमाम उत्पीड़ित जनता के साथ-साथ दण्डकारण्य की संघर्षशील जनता भी लम्बे अरसे से इस खबर के इन्तजार में थी। ज्यों ही विभिन्न माध्यमों के जरिए यह खबर सभी इलाकों में फैल गई, क्रान्तिकारी जनता और क्रान्ति के समर्थकों से तरह-तरह की प्रतिक्रियाएं सामने आईं। देश की दो दिग्गज क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टियों के विलय के साथ-साथ दो जांबाज़ जन फौजों – पीएलजीए और पीजीए का भी विलय एकीकृत पीएलजीए में हो गया। इस प्रकार 21 सितम्बर 2004 का दिन देश के क्रान्तिकारी आन्दोलन के इतिहास में एक महत्वपूर्व व अविस्मरणीय दिन के रूप में अंकित हो गया। इस मौके पर एकीकृत केन्द्रीय कमेटी के आह्वान पर पूरे दण्डकारण्य में कई जगहों पर नवम्बर के मध्य से लेकर दिसम्बर के पहले सप्ताह तक कई आमसभाएं हुईं। इन सभाओं में हजारों लोगों ने भाग लिया और नई पार्टी के गठन का तहेदिल से स्वागत किया। इस मौके पर एकीकृत केन्द्रीय कमेटी द्वारा निर्धारित पार्टी के फौरी व प्रधान कार्यभारों को जनता में विस्तृत रूप से प्रचारित किया गया। इन सभाओं के आयोजन की रिपोर्टें डिवीजन-वार इस प्रकार हैं –

उत्तर बस्तर डिवीजन

डिवीजन के सभी इलाकों में नई पार्टी के गठन के बारे में प्रचार कार्यक्रम चलाया गया। पोस्टर, पर्चे, दीवार-लेखन, बैनर आदि के जरिए लोगों में एक उत्साहपूर्ण माहौल बनाया गया। प्रतापुर इलाके के मेंड्रा गांव में एक आमसभा बुलाई गई जिसमें करीब 25 गांवों से 3,000 स्त्री-पुरुषों ने भाग लिया। इस सभा को डिवीजनल कमेटी सदस्य कॉमरेड प्रभाकर ने सम्बोधित किया। उन्होंने अपने भाषण में दो पार्टियों के विलय के ऐतिहासिक महत्व पर अपनी बात रखी। इसके अलावा डीएकेएमएस, केएएमएस और सीएनएम सदस्यों ने सभा को सम्बोधित किया और बाद में सांस्कृतिक कार्यक्रम पेश किए।

कडिमे, मेस्पी और काकनार गांवों में भी आमसभाओं का आयोजन किया गया।

रावघाट इलाके के डोबरी हाट बाजार में नई पार्टी के गठन के उपलक्ष्य में एक आमसभा आयोजित की गई। इस सभा को स्थानीय छापामार दस्ता कमाण्डर कॉमरेड सन्नाय ने सम्बोधित किया। सभा के पहले गरीब 30 गांवों की जनता ने "भाकपा (माओवादी) जिन्दाबाद", "अमर शहीदीरकुन जुहार", आदि नारे लगाते हुए जुलूस निकाला। इसके अलावा चारगांव, भैसासुर और गालडेनाल हाट बाजारों में भी आमसभाएं आयोजित की गईं।

केसकाल इलाके में नई पार्टी के गठन के मौके पर किसकोडूर गांव में एक बड़ी आमसभा हुई जिसमें करीब 30 गांवों से 2,000 लोगों ने भाग लिया। केलुंगा गांव में आयोजित एक और सभा में 40 गांवों से 3,000 लोगों ने भाग लिया। गोर्रा गांव में 15 गांवों से 600 लोगों ने आमसभा में भाग लिया। दूसा गांव में आयोजित एक आमसभा में 10 गांवों से 500 लोगों ने भाग लिया। इन सभी सभाओं को डीएकेएमएस और केएएमएस नेताओं ने सम्बोधित किया। किसकोडूर और केलुंगा गांवों में आयोजित सभाओं को पार्टी एरिया कमेटी सदस्यों ने भी सम्बोधित किया। इन सभी सभाओं में स्थानीय और एरिया सीएनएम कलाकारों ने सांस्कृतिक कार्यक्रम पेश किए।

गड़चिरोली डिवीजन

दोनों पार्टियों के विलय और नई पार्टी – भाकपा (माओवादी) के गठन के मौके पर सिरोंचा इलाके के कल्लेडा गांव में एक आमसभा बुलाई गई जिसमें 25 पुरुषों और 5 महिलाओं ने भाग लिया। केआरएल गांव में आयोजित सभा में 50 पुरुषों ने भाग लिया।

दो माओवादी पार्टियों के विलय का जश्न मनाती दण्डकारण्य की जनता

अहेरी इलाके के 5 गांवों में आमसभाएं आयोजित की गईं। कुरुंबापल्ली गांव में 40, कोडिशेपल्ली में 250, कप्पावंचा में 80, नयगुंडा में 70, चेल्लेवाडा में 150 – कुल 590 लोगों ने इन सभाओं में भाग लिया। इस मौके पर गांव-गांव में पोस्टर लगाए गए। पर्चे भी बांटे गए। मुख्य केन्द्रों और बसों में पोस्टर चिपकाकर प्रचार किया गया।

भामरागढ़ इलाके में इस मौके पर 7 नवम्बर से 8 दिसम्बर तक गांव-गांव में नई पार्टी के गठन का प्रचार किया गया। इस इलाके में एक बड़ी सभा में 10 गांवों से 285 पुरुषों और 42 महिलाओं ने भाग लिया। पेरिमिलि इलाके में 5 गांवों से

410 पुरुषों और 150 महिलाओं ने एक सभा में भाग लिय। अन्य इलाकों में गांव स्तर पर सभाएं आयोजित की गईं।

भाकपा (माओवादी) के गठन का स्वागत करते हुए जुलूस

भामरागढ़ एरिया ते पार्टी एकता ता मीटिंग (गोण्डी भाषा ते)

सीपीआई (एम-एल) [पीपुल्सवार] ओसो एमसीसीआई – इव रंड माओवादी पार्टींग कलियता पय्या जनताना लोप्पो पक्का खुशी इंदना वाता। आणि एकता ता पय्या भारत ता कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) लोकरकु आह्वान कीसोरे सशस्त्र कृषि क्रान्तिकारी गुरिल्ला लड़ाई तुन भारत ता कोंटा-कोंटा ते फैले कीयला साटि मीटिंग-सभा कीयना जरगता।

अद्रमे 7 तल 13 एवनाल पूना पार्टी ता विलय ता प्रचार कीयना इंजि वेह्ता हिसाब ते भामरागड एरिया लोप्पो कुरसनार आणि गोपनार इव रेंड जागाने अलग-अलग मीटिंग ताकता। मीटिंग ते 10 नाह्कुनल जमासि पूना पार्टी सीपीआई (माओवादी) ता पोल्लो केंजला साटि वात्तोर। वात्तोरा लोप्पो पूरा 285 दादालोर, 42 बाईस्कु मंदु। आणि गट्टा एरिया लोप्पो वेने मीटिंग कीत्तास्के 10 नाह्कुनल 155 लोकुर वात्तोर। दाना लोप्पो बाइस्कु 25 वासि। अद्रमे पुलिस दमन मत्तेकाइ, नयबेरेड पोंगसोर मत्तेकाइ ओरा पेट्रोलिंग तुन वेने वेंडिसि वात्तोर। आणि बाइस्कु पेकोरिन पोयसि तिप्पल आसि केला नयबेरेड वेंडिसि वात्तांग।

मीटिंग चालू आयनेके मुन्ने पार्टी झण्डा तरहची पाटा ओसि पय्या उंदि मिनट केमेके मंजि आत्तोरकु सीता कीसि ओरा पेद्दीरते नारा हित्तोर। "कॉमरेड पूसू अमर रहें", "कॉमरेड भूमन्ना अमर रहें" इंजोर शहीदीरकुन सुरता कीत्तोर। पय्या मीटिंग चालू आत्ता। मीटिंग लोप्पो दल कमाण्डर पहली भाषण लोप्पो पूना पार्टी एकता ता बारे ते वेह्चोरे ताना पय्या डिवीजनल कमेटी सदस्य वडकतस्के रेंड पार्टींग बारांक कलियता, इव सब्बे पूरा विस्तार ते वेह्तोर। "नेंड मावा पार्टी बचोन बेहरा देश लोप्पो फैले मासोरे मावा लड़ाई मुन्नेटकु अंजोर मंता। अदिनकु सबेटोरे जनता लड़ेमायला पीएलजीए लोप्पो भर्ती आयला तैयार मंदना" इंजोरे वडक्तोर। आखिर ते अध्यक्ष ना भाषण संगे मीटिंग मारता। मारनस्के इंटरनेशनल पाटा ओत्तोर। लोकुर रेंडु लड़ाई कीयनवु पार्टींग कलियता इंजि पक्का खुशी आत्तोर।

गट्टा एरिया ते पीएलजीए सप्ताह मानेमात्तोर

सीपीआई (एम-एल) [पीपुल्सवार] आणि एमसीसीआई रेंड पार्टींग कलियता मौकते रेंडु पार्टीना नेतृत्व ते ताकना सेनांग वेने एकता आसि पीएलजीए बनेमात्ता। 2 दिसम्बर तल 8 दिसम्बर एवनाल पीएलजीए सप्ताह मानेमायना इंदना पार्टी ता फैसला ता अनुसार नाटे-नाटे प्रचार कीमुडु आत्ता। इदु मौका ते जनता लोप्पो जन मुक्ति छापामार सेना तुन जन मुक्ति सेना (पीएलए) लेक्का बदले कीयना इंजि, नाटेना स्तर तल केन्द्र एवनाल लूटी सरकार तुन ताह्किसि पोह्चोरे जनताना सरकार तुन पंडना इंजि, आधार इलाकांग ना निर्माण कीयना इंजोरे प्रचार कीमुड आत्ता।

इदु मौकाते गट्टा नाटे ग्राम पंचायत भवन तुन पीएलजीए सैनिकलोर बोडसित्तोर। पोलिस थाना आधा किलोमीटर मत्तेकाय पीएलजीए तोर वेरिवा लेवा इद कार्यवाही कीत्तोर। अगा पोस्टर, बैनर दोह्तोर। अद्रमे पूरा एरिया ते वेने पोस्टर, बैनर दोह्चि पक्का प्रचार कीत्ता।

सिरोंचा के लोगों ने पीएलजीए दिवस मनाया

2 दिसम्बर – पीएलजीए दिवस के मौके पर इस इलाके के 30 गांवों में दीवर-लेखन किया गया। सडकों पर भी पेंट से नारे लिखे गए। जगह-जगह पर पोस्टर भी लगा दिए गए। कारसवेल्ली गांव में सुबह 9 बजे से 12 बजे तक सभा आयोजित की गई जिसमें 160 लोगों ने भाग लिया। कोत्तापल्ली गांव में रात में सभा आयोजित की गई जिसमें 350 लोगों ने भाग लिया। नंदिगामा गांव में भी एक सभा की गई जिसमें 25 लोगों ने भाग लिया।

1980 के दशक में सिरोंचा इलाके में पूर्व की पीपुल्सवार पार्टी ने कदम रखा था। लेकिन कुछ कारणों से बीच में यहां पर क्रान्तिकारी गतिविधियां बन्द रखी गईं थीं। फिर एक बार पार्टी इस इलाके में आई और आधार इलाकों की स्थापना और राजसत्ता के अंगों के निर्माण के लक्ष्य के साथ जनता को गोलबन्द कर रही है। इस मौके पर जनता को इन सब बातों के बारे में विस्तारपूर्वक बताया गया और युवाओं का आह्वान किया गया कि वे पीएलजीए में बड़ी संख्या में भर्ती होकर देश भर में लोकयुद्ध को फैलाने में सहयोग दें। इस मौके पर जनता ने उत्साह के साथ नारे लगाए और अपनी रोजमर्रा की समस्याओं के सम्बन्ध में भी लोगों ने चर्चा की।

अहेरी इलाके में ...

इस मौके पर गांव-गांव में पोस्टर-पर्चे बांटकर प्रचार किया गया। नई पार्टी के गठन के साथ-साथ पीएलजीए की वर्षगांठ के बारे में भी प्रचार किया गया। मेनबिनपेटा, छेलावाडा, कोडसापल्ली, कुरुम, रापेली, एकेरा, नेयगुंडा, बंगारमपेटा, तोंडेरा, गोदमडुगु आदि गांवों में इस मौके पर सभाएं आयोजित की गईं। इसी मौके पर पीएलजीए के सदस्यों ने गोविंदगांव में मरोती कोडापे नाम के एक मुखबिर का सफाया कर दिया। इसने 2004 में एक बार पुलिस को सूचना देकर छापामार दस्ते पर हमला करवाया था। इसलिए जनता और पार्टी मिलकर इसका सफाया करने का फैसला लिया था जिस पर कि अब अमल किया गया।

(शेष पृष्ठ 40 पर ....)

संघर्ष की राह पर गड़चिरोली जनता का आगे कदम

जनता का दुश्मन वेंकैया को जन अदालत ने दी माफी

सिरोंचा इलाके के कारसवेल्ली गांव का निवासी वेंकैय्या ने 14 साल पहले छापामार दस्ते में काम किया था। बाद में वह पीछे हट गया। इसका छोटा भाई को कई साल पहले जनता के फैसले के मुताबिक छापामारों ने मार डाला था। उसके खिलाफ महिलाओं के साथ बलात्कार करने और दलितों पर हमला करने जैसे संगीन आरोप थे। कुछ समय बाद उसका बड़ा भाई वेंकैय्या भी गांव में मुखियागिरी करने लगा और शिवसेना पार्टी का गुण्डा बन गया। महिलाओं के साथ अत्याचार और दलितों के साथ मारपीट इसका रोजमर्रा का काम बन गया। जमीनों पर जबर्दस्ती कब्जा करता रहता था। ऐसे समय में पार्टी को इसका सफाया करने का फैसला लेना पड़ा। लेकिन कुछ प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण यह फैसला लागू नहीं किया जा सका।

लेकिन बाद में वेंकैय्या की मां और बहन ने छापामार दस्ते से मिलकर वेंकैय्या को माफ करने की गुजारिश की। सारी गलतियों को जनता के सामने कबूलवाने और शिवसेना पार्टी से इस्तीफा दिलवाने को वे तैयार हुईं। बाद में 24 नवम्बर 2004 को गांव के सारे लोगों को बुलाकर जन अदालत लगाई गई। वेंकैय्या ने अपनी गलतियां स्वीकार कीं और गांव की साझा जमीन को भी छोड़ने को राजी हुआ जिस पर उसने कब्जा कर रखा था। जनता और पार्टी ने इस पर विचार-विमर्श करके उसे यह चेतावनी देकर छोड़ दिया कि आइंदा ऐसी गलतियां करेगा तो उसे मार डाला जाएगा।

1 नवम्बर 2004 को गड़चिरोली डिवीजन के मानेवारा के निकट पुलिस के साथ लड़ते हुए शहीद हुई कॉमरेड सरिता (लिम्मी)

पुलिस पटेल सुंगा वेलादी का सफाया

बेज्जूरपल्ली गांव का पुलिस पटेल सुंगा वेलादी न सिर्फ शुरू से जनता के खिलाफ था, बल्कि 14-15 सालों से पार्टी के सम्बन्ध में पुलिस की मुखबिरी कर रहा था। कई कोशिशों के बावजूद भी उसमें कोई बदलाव नहीं आया, इसलिए 23 नवम्बर 2004 को इसका सफाया कर दिया गया। गांव में छोटी-मोटी झगड़ा होता है तो पटेल सुंगा उसके बारे में पुलिस को इत्तला दिया करता था। लोगों को पुलिस से पिटवाया करता था। उसे कई बार चेतावनी दी गई कि अपने इन करतूतों से बाज आ जाए। फिर भी उसने नहीं सुना। वह खुद पटेलगिरी करता था जबकि अपने बेटे को उप सरपंच बनवाया। पुलिस द्वारा आयोजित 'गांव बन्दी' मीटिंग में सुंगा ने पार्टी के खिलाफ भाषण दिया। गांव के जन संगठन सदस्यों को पुलिस द्वारा गिरफ्तार करवाया और पिटवाया।

गांव की जनता की मांग पर छापामार दस्ते ने बाप-बेटे की पिटाई की। लेकिन दो दिन भी नहीं हुए, सुंगा ने गांव के एक गरीब किसान को कमाण्डो पुलिस द्वारा गिरफ्तार करवा दिया। उसने पुलिस को बताया कि उस किसान ने छापामारों को खाना खिलाया। कमाण्डो बलों ने उस किसान को नंगा बनाकर पाशविक यातनाएं दीं। इस घटना के बाद लोगों ने समझ लिया कि यह सुधर नहीं सकता। जनता के मत को मद्देनजर रखते हुए छापामार दस्ते ने 23 नवम्बर की रात में इसके घर पर धावा बोलकर उसे वहीं मार डाला।

मुखबिर साधू नरोटी को मौत की सजा

गड़चिरोली डिवीजन के एटापल्ली इलाके के बुरगी गांव का निवासी था साधू नरोटी। इसे पीएलजीए के जवानों ने जनता के फैसले के मुताबिक 25 नवम्बर 2004 को मौत के घाट उतार दिया। साधू पहले जन संगठन में काम किया था और बाद में 2003 में पुलिस दमन के मद्देनजर दस्ते में भर्ती हुआ था। 2004 अप्रैल में वह घर देखने के बहाने चला गया और वहीं रहने लगा। दस्ते ने उसे पूछा तो मां बीमार है कहकर बहाना बता दिया। तब दस्ते ने उसे ठीक से रहने की हिदायत दी। बाद में साधू ने एक दुकानदार से पार्टी के नाम से पैसा वसूल लिया। बाद में एसपी के सामने आत्मसमर्पण किया। आत्मसमर्पण के बाद उसने पुलिस के साथ घूमना शुरू किया। इसका बड़ा भाई रामा भी पुलिस मुखबिरी करता था। दोनों तालमेल के साथ पुलिस को सारी सूचनाएं देने लगे। साधू जन संगठन सदस्यों को पुलिस के हाथों पकड़वाया करता था। बाद में इनके काले कारनामों के बारे में लोगों के बीच चर्चा की गई। लोगों ने बड़ा वाला रामा को सुधारने का एक मौका देने और साधू का सफाया करने का फैसला सुनाया। इसी फैसले को लागू करते हुए छापामार दस्ते ने साधू का सफाया कर दिया।

वन विभाग वालों का ट्रैक्टर फुंका

गड़चिरोली डिवीजन के एटापल्ली इलाके के कसनसूर रेंज के कोटिमी बीट में वन विभाग वालों ने जंगल कूप चालू किया। दण्डकारण्य में काफी पहले ही जंगल कूपों पर रोक लगाई गई। इसके बावजूद चुपचाप से वन विभाग वालों ने यह हरकत की। इससे जंगल का विनाश हो रहा था। दो-तीन बार वन विभाग वालों को स्थानीय जन संगठन वालों ने समझाने की कोशिश की, पर वे नहीं माने। बाद में 8 नवम्बर 2004 के दिन जन मिलिशिया और जन संगठन सदस्यों ने मिलकर वन विभाग वालों के एक ट्रैक्टर को जला दिया और वहां काम करवा रहे कर्मचारियों को भगा दिया।

पुलिस मुखबिर व जनता का दुश्मन कुडमेत बंडू का सफाया

अहेरी इलाके के कमलापुर रेंज कप्पावंचा गांव का निवासी कुडिमेत बंडू को स्थानीय छापामार दस्ते ने जनता के फैसले के मुताबिक 22 अगस्त 2004 को मार डाला। वह एक खूंखार आदमी था। एक बेकसूर आदमी की इसने फांसी पर लटकाकर हत्या की। एक और आदमी का छोटे-मोटे झगड़े में सिर फोड़ दिया। एक और व्यक्ति को दारू में एसिड मिलाकर पिलाकर मरवाने की कोशिश की। महिलाओं के साथ गाली-गलौज करना, पार्टी को उसके बारे में बताने पर पुलिस से पिटवाने की धमकियां देना आदि उसके कारनामों से लोग तंग आ चुके थे। पुलिस के साथ इसके मजबूत सम्बन्ध थे। इसे छापामार दस्ते ने एक बार चेतावनी देकर छोड़ दिया था, लेकिन उसका कोई असर नहीं रहा। यह सब देखते हुए जनता ने इसका सफाया करने का फैसला लिया। ★

डीएकेएमएस के डिवीजन अधिवेशन कामयाबी के साथ सम्पन्न

उत्तर बस्तर डिवीजन

उत्तर बस्तर डिवीजन में जन संगठनों का सुदृढ़ीकरण का सिलसिला जारी है। 2004 सितम्बर-अक्टूबर महीनों में डिवीजन के सभी इलाकों में डीएकेएमएस के ग्राम व रेंज स्तर के अधिवेशन सफलतापूर्वक सम्पन्न हो गए। इन अधिवेशनों में नई कार्यकारिणी कमेटियों का चुनाव किया गया। केसकाल इलाके में 5, प्रतापुर इलाके में 4 और रावघाट इलाके में 3 रेंजों में डीएकेएमएस के रेंज अधिवेशन आयोजित किए गए। बाद में डिवीजनल स्तर पर अधिवेशन की तैयारियां शुरू हुईं।

13-15 दिसम्बर के बीच डीएकेएमएस का तीसरा डिवीजन अधिवेशन आयोजित किया गया। इस अधिवेशन ने 7 सदस्यों की एक नई कार्यकारिणी का चुनाव किया। इस अधिवेशन में तीन इलाकों से कुल 31 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसके अलावा केएएमएस से 6 महिला कॉमरेडों ने साथी-प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया। प्रतिनिधियों और सुरक्षा कॉमरेडों को मिलाकर कुल 60 कॉमरेड जीरमतराय शहीद कम्यून में इकट्ठे हो गए। हाथों में लाल झण्डे लेकर उन्होंने सबसे पहले नारेबाजी करते हुए जुलूस निकाला। ''अमर शहीदों को लाल सलाम'', ''डीएकेएमएस जिन्दाबाद'', ''जंगल पर अधिकार आदिवासियों का है'', ''बस्तर की सम्पदाओं का दोहन करने वाले साम्राज्यवादियों और दलाल पूंजीपतियों की शोषणकारी नीतियों का विरोध करो'', आदि नारे लगाए गए। बाद में कॉमरेड नागेश ने डीएकेएमएस का झण्डा फहराया और सभी ने अन्तर्राष्ट्रीय गान गाया।

बाद में एक अन्य कॉमरेड ने शहीद स्मारक का अनावरण किया। बाद में कॉमरेड नागेश ने डीएकेएमएस के डिवीजनल अधिवेशन की पृष्ठभूमि पर अपनी बात रखी। जीरमतराय गांव में दुश्मन के हमले में शहीद हुए कॉमरेडों के बारे में, दुश्मन से हथियार छीनकर लाते समय गोली का शिकार हुए कॉमरेड प्रेम के बारे में, और दण्डकारण्य के क्रान्तिकारी आन्दोलन को आगे ले जाने के दौरान अपनी जान कुरबान करने वाले तमाम शहीदों को तथा भारत की नव जनवादी क्रान्ति के दरमियान शहीद हुए तमाम शहीदों को याद किया।

झण्डा फहराने के कार्यक्रम के बाद प्रतिनिधियों और साथी-प्रतिनिधियों ने शहीद कॉमरेड प्रेम हाल में प्रवेश किया। बाद में कॉमरेड नागेश ने प्रतिनिधियों का परिचय करवाया। बाद में अधिवेशन के संचालन के लिए तीन सदस्यीय अध्यक्षमण्डल चुन लिया गया। इस सभा के संचालन के लिए पार्टी के दो डीवीसी सदस्यों ने स्टीरिंग कमेटी के रूप में काम किया।

पहले दिन पार्टी की डिवीजनल कमेटी सचिव कॉमरेड सुजाता ने डीएकेएमएस का घोषणा-पत्र पेश किया। बाद में इस पर चर्चा के बाद में अधिवेशन ने इसे कुछेक सुधारों के साथ एक मत से पारित किया। बाद में डीएकेएमएस के पिछले दो सालों के क्रियाकलापों की रिपोर्टें रेंज वार पेश की गईं। इसके बाद राजनीतिक प्रस्ताव पर चर्चा हुई। दुनिया के नम्बर एक दुश्मन अमेरिकी साम्राज्यवाद के खिलाफ किसानों को गोलबन्द करने तथा साम्राज्यवादियों के हित में भारतीय दलाल पूंजीपतियों द्वारा भूमण्डलीकरण व निजीकरण के नाम से जारी बस्तर की सम्पदाओं की लूट के खिलाफ लड़ने का संकल्प लेते हुए प्रस्ताव पारित किए गए।

पंचायत चुनावों के बहिष्कार, डीएकेएमएस में महिलाओं की भागीदारी, नशीली पदार्थों पर प्रतिबन्ध, जंगल बचाव, राजकीय दमन के खिलाफ आगामी 26 जनवरी को दण्डकारण्य बन्द, वन सुरक्षा समिति व एकता परिषद जैसे सरकारी व गैर-सरकारी संगठनों के प्रति हमारा रवैया, रीति-रिवाज, आदि-आदि कई मुद्दों पर अधिवेशन ने बहस के बाद प्रस्ताव पारित किए। इसी मौके पर वनोपजों के दाम बढ़ाने तथा बांस व तेन्दु पत्ता मजदूरी दाम बढ़ाने के लिए संघर्ष करने का प्रस्ताव भी किया गया।

तीसरा दिन आत्मालोचना व आलोचना का दौर चला। बाद में अधिवेशन ने 7 सदस्यीय कार्यकारिणी का चुनाव किया। अधिवेशन के समाप्त होने के बाद नई कमेटी ने झंडा मैदान में खड़े होकर शपथ ली। उन्होंने नई जनवादी क्रान्ति के लक्ष्य से आदिवासी किसानों की समस्याओं के हल के लिए तथा दण्डकारण्य को आधार इलाका बनाने के लिए संघर्ष जारी रखने की शपथ ली। बाद में झण्डा उतारा गया।

पश्चिम बस्तर डिवीजन

डिवीजन में तीन इलाकों में कुल 10 रेंजों के अधिवेशनों और गंगलूर एरिया अधिवेशन के बाद 14-16 दिसम्बर 2004 को डीएकेएमएस का 6वां डिवीजन अधिवेशन आयोजित किया गया। कॉमरेड रामदास हाल में आयोजित इस अधिवेशन में कुल 24 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। ''छापामार लड़ाई को तेज करेंगे, दुश्मन के हमले को हरा देंगे'', ''जल-जंगल-जमीन पर आदिवासियों का अधिकार चाहिए'', ''नकली चुनाव बहिष्कार कीमुट – जनताना सरकार बना कीमुट'', ''सब्बे अधिकार जनतना सरकारके मंदावाले'', ''उडदानोरिके भूमि'' इत्यादि नारे जब शहीद कॉमरेड सुखदेव मैदान में जोर-शोर से लगाए जा रहे थे – डीएकेएमएस का झण्डा फहराया गया। बाद में कॉमरेड मंगू ने शहीद स्मारक का अनावरण किया।

बाद में सारे प्रतिनिधियों ने कॉमरेड भूमाल दरवाजे से होते हुए कॉमरेड रामदास हाल में प्रवेश किया। प्रतिनिधियों का परिचय, अध्यक्षमण्डल व स्टीरिंग कमेटी का चुनाव वगैरह औपचारिकताओं को पूरा करने के बाद पार्टी के डिवीजनल कमेटी सचिव कॉमरेड गणेश ने उद्घाटन-भाषण दिया। उन्होंने अपने भाषण में कहा, ''आज राज्य में फासीवादी रमनसिंह सरकार जनता को छलने के लिए एक तरफ सुधारों की ढोंगबाजी करते हुए ही दूसरी तरफ चौतरफा दमन तेज कर रही है। कमांडो फोर्स ट्रेइनिंग, स्पेशल टास्कफोर्स का गठन, पोटा कानून के विकल्प के रूप में छत्तीसगढ़ विशेष सुरक्षा अधिनियम-2004 आदि कदम उठा रही है। रोजगार, सिंचाई, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि बुनियादी सुविधाएं मुहैया कराने में बुरी तरह नाकाम रही सरकार सार्वजनिक संपत्तियों को औने-पौने दामों पर निजी कम्पनियों को बेच डाल रही है। साम्राज्यवादी भूमण्डलीकरण की नीतियों पर तेजी से अमल कर रही है।'' इसके अलावा कॉमरेड गणेश ने आगामी पंचायत चुनावों के बारे में, सरकार के झूठे सुधार कार्यक्रमों के बारे में प्रतिनिधियों को आगाह करते हुए कहा इनके प्रति सचेत रहने की जरूरत है। आखिर में उन्होंने कहा कि दण्डकारण्य को आधार इलाका बनाने के लक्ष्य के साथ आगे बढ़ रहे जनयुद्ध में

डीएकेएमएस एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। ''क्रान्तिकारी किसान आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए यह अधिवेशन समुचित फैसले लेगा, इस आशा के साथ मैं अपनी बात खत्म करता हूं,'' कहकर उन्होंने अपना भाषण समाप्त किया।

बाद में अध्यक्षमण्डल ने एजेन्डा पेश किया जिसे अधिवेशन ने पारित किया। और उसके बाद जेलों में बन्द साथियों का क्रान्तिकारी अभिनन्दन करते हुए एक प्रस्ताव पेश किया गया जिसे प्रतिनिधियों ने पारित किया। बाद में पार्टी के डिवीजनल कमेटी सदस्य कॉमरेड नागन्ना ने डीएकेएमएस का घोषणा-पत्र पेश किया जिसे प्रतिनिधियों ने चर्चा के बाद पारित किया। बाद में विभिन्न जन संघर्षों और राजनीतिक आन्दोलनों में डीएकेएमएस की भूमिका के बारे में प्रतिनिधियों ने चर्चा की। उन संघर्षों के सकारात्मक व नकारात्मक पहलुओं पर भी चर्चा की। बाद में यह निष्कर्ष निकाला गया कि विभिन्न संघर्षों में आने वाले लोगों को डीएकेएमएस में गोलबन्द करने में कुछ खामियां हैं। आने वाले दिनों में इस कमजोरी से बाहर आने का संकल्प लिया गया।

बाद में डीएकेएमएस की संगठनात्मक रिपोर्ट पेश की गई जिसमें मुख्य रूप से संगठन को मजबूत बनाने के लिए प्रयास तेज करने की जरूरत पर जोर दिया गया। इसके अलावा विभिन्न स्तरों पर संगठन की बैठकों का नियमित आयोजन में भी खामियों को पहचाना गया। विभिन्न स्तरों की कार्यकारिणियों को मजबूत बनाने की बात पर जोर दिया गया। जनता को विभिन्न मुद्दों पर गोलबन्द करते हुए बड़े पैमाने पर जन आन्दोलनों का निर्माण करने की जरूरत को रेखांकित किया गया।

आखिर में जनवरी 2005 में होने वाले पंचायत चुनावों का बहिष्कार करने, पर्यटन उद्योग के विकास के तहत राष्ट्रीय उद्यानों के निर्माण का विरोध करने आदि प्रस्ताव पारित किए गए।

इन सभी बहसों और प्रस्तावों के बाद आत्मालोचना और आलोचना का दौर चला जिसमें डीएकेएमएस की पुरानी डिवीजनल कमेटी ने अपनी गलतियों के प्रति आत्मालोचना पेश की। इस कार्यक्रम के बाद 5 सदस्यों की एक नई कमेटी का चुनाव किया गया। समापन भाषण कॉमरेड नागन्ना ने दिया। उन्होंने कहा, ''आज हम ऐसे दौर में यह अधिवेशन चला रहे हैं जबकि देश की दो ताकतवर माओवादी पार्टियों का विलय हो गया है और भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के रूप में एक एकीकृत पार्टी का गठन किया जा चुका है। इस परिणाम से जहां एक तरफ दुश्मन वर्ग डर से कांप रहे हैं, वहीं दूसरी तरफ शोषित जनता बेहद खुश है। लुटेरे शासक वर्गों ने अपनी शोषणकारी राजसत्ता को बचाए रखने के लिए क्रान्तिकारी आन्दोलन के खिलाफ चौतरफा हमला छेड़ रखा है। इसका मुकाबला हमें करना होगा। शक्तिशाली जन आन्दोलनों का निर्माण से ही यह सम्भव हो सकेगा। पार्टी, जन सेना और जन संगठनों को मजबूत बनाकर हम यह काम कर सकते हैं।''

अधिवेशन के अंतिम चरण में प्रतिनिधियों और सुरक्षा कॉमरेडों ने मिलकर झण्डा मैदान तक जुलूस निकाला और नव निर्वाचित डिवीजनल कमेटी सदस्यों ने अपने ऊपर रखे गए कार्यभारों को पूरा करने की शपथ ग्रहण की। कॉमरेड गणेश ने इस कार्यक्रम को सफल बनाने में योगदान करने वाले ग्रामवासियों और पीएलजीए के योद्धाओं को धन्यवाद ज्ञापित किया। ✶

(.... पृष्ठ 37 का शेष)

एटापल्ली इलाके में ...

पीएलजीए दिवस के मौके पर दो स्थानों पर सभाएं हुईं। यहां शहीदों की याद में स्मारक खड़े कर दिए गए। एक सभा में 160 और दूसरी जगह पर 75 लोगों ने सभा में भाग लिया। सभा स्थल पर आसपास में शहीदों के नाम लिखी हुईं तख्तियां लगा दी गईं। उन पर कॉमरेड्स श्याम, महेश, मुरली, भूमन्ना, स्वरूपा, राहुल, सरिता आदि कॉमरेडों के नाम लिखे गए। कॉमरेड मंगु ने झण्डा फहराकर सभा का उद्घाटन किया। उन्होंने अपनी सगी बहन शहीद कॉमरेड सरिता की जीवनी के बारे में बताया। बाद में कॉमरेड मीना ने सभा को सम्बोधित करते हुए पीएलजीए के विकासक्रम के बारे में बताया। पार्टी और जन संगठनों से जुड़े कई अन्य कॉमरेडों ने भी सभा को सम्बोधित किया। लोगों को आह्वान किया गया कि पीएलजीए को मजबूत बनाते हुए उसे पीएलए में विकसित किया जाए और जनयुद्ध को आगे बढ़ाया जाए। इस सभा में वर्तमान में दुश्मन द्वारा अपनाए जा रहे दाव-पेंचों के बारे में भी वक्ताओं ने चर्चा की और उन्हें मात देने की जरूरत पर जोर दिया।

पेरिमिलि इलाके में ...

पेरिमिलि इलाके के एटापल्ली रेंज में 11 गांवों के लोगों ने 5 स्थानों पर 2 दिसम्बर को पीएलजीए दिवस मनाया। इस मौके पर कुल 560 लोगों ने अलग-अलग कार्यक्रमों में भाग लिया। इन कार्यक्रमों में स्थानीय जनता के अलावा स्थानीय छापामार दस्ता और प्लटून-3 के कुछ सदस्यों ने भी भाग लिया। एक जगह पर आयोजित सभा की अध्यक्षता कॉमरेड दूलसा ने की। सभा के प्रारम्भ के पहले पीएलजीए का झण्डा फहराया गया। बाद में नई जनवादी क्रान्ति के लक्ष्य को पाने के लिए अपनी जान कुरबान करने वाले शहीदों को याद करते हुए उनके सम्मान में दो मिनट की खामोशी मनाई गई। बाद में कॉमरेड रवी ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि हमारी पार्टी पिछले 35 सालों से सशस्त्र संघर्ष कर रही है। उन्होंने विस्तारपूर्वक बताया कि केन्द्र-राज्य सरकारें टाडा, पोटा जैसे काले कानून लाकर क्रान्तिकारी आन्दोलन को कुचलने की कोशिश करती आ रही हैं। उन्होंने लोगों का आह्वान किया कि लुटेरे शासक वर्गों के फासीवादी दमनचक्र को हराकर आन्ध्र, बिहार-झारखण्ड, दण्डकारण्य आदि राज्यों में जारी क्रान्तिकारी आन्दोलन को आगे बढ़ाया जाए।

बाद में कॉमरेड नवीना और भारती ने सभा को सम्बोधित किया। उन्होंने अपनी बात रखते हुए कहा कि समाज में आधी संख्या महिलाओं की है, पर आज भी पुरुष का दबदबा कायम है। उन्होंने महिलाओं का आह्वान किया कि पीएलजीए में भर्ती होकर एक नए समाज के लिए लड़ना ही महिलाओं के सामने एक मात्र विकल्प है जो शोषण से मुक्ति के साथ पुरुष की दासता से भी मुक्ति की गारन्टी देता है। आखिर में कॉमरेड दूलसा ने अपनी बात रखी। उन्होंने पीएलजीए को एक मजबूत जन सेना में तब्दील करने की जरूरत पर जोर देते हुए सभा का समापन किया। बीच-बीच में पीएलजीए के सदस्यों ने कई क्रान्तिकारी गीत पेश करके लोगों को उत्साहित किया। ''जन सेना के बिना जनता को कुछ नहीं होगा'' – इस संदेश के साथ यह कार्यक्रम सफलतापूर्वक समाप्त हुआ।

इस इलाके में गुण्डापुर, कर्पनपूंडि, सुरजागड़, नेंडेर, मल्लमपाड, इतुलि, पुरसलगोंदी, पाजिगूडा, झारावाडा, पेटा, बांडे आदि गांवों के लोगों ने कई स्थानों पर आयोजित सभाओं में भाग लेकर उन्हें सफल बनाया। ✶

(.... अन्तिम पृष्ठ का शेष)

भी अधिक अमेरिकी सैनिकों ने अपनी जानें गंवाईं। प्रतिरोध का सामना करके प्रत्यक्ष शासन करने में नाकाम अमेरिका ने वहां अपने दलाल को गद्दी पर बिठाया और चुनाव की नौटंकी पूरी की। हालांकि सेना वहीं है।

यहां यह बताना लाजिमी होगा कि उपरोक्त तीनों घटनाओं में साम्राज्यवाद के मंसूबे साफ हैं। उसे मुनाफा चाहिए। चाहे किसी भी कीमत पर। लाखों लोग भूखे रहें, बीमार पड़ें, मरें, कटें। चाहे बन्दूक चलानी पड़े, बम गिराना पड़े, इंसानियत को दफनाना पड़े।

जब तक साम्राज्यवाद का अस्तित्व रहेगा, भूख और मौत कायम रहेंगी

अपने सौ साल के इतिहास में साम्राज्यवाद ने दुनिया को भूख, बीमारी और मौत के सिवाए कुछ नहीं दिया। चूंकि साम्राज्यवाद, पूंजीवाद का ही उच्च और चरम अवस्था है, इसलिए उसे बाजार एवं मुनाफे के सिवाए और किसी चीज की चिन्ता नहीं है। साम्राज्यवादी ताकतों के बीच बाजारों के लिए छीना-झपटी का नतीजा ही प्रथम विश्व युद्ध था जिसने लाखों लोगों की जानें लीं। साम्राज्यवादियों के बीच होड़ ही दूसरे विश्व युद्ध का सबब बनी। इसने साढ़े पांच करोड़ लोगों की जानें लीं। तमाम दुनिया को तबाह कर दिया।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद साम्राज्यवादियों ने सबक लिया। विश्व युद्ध के बदले स्थानीय युद्ध करने लगे। इन स्थानीय युद्धों में अब तक 4 करोड़ लोग मारे गए। तमाम देशों की अर्थव्यवस्थाओं को युद्ध-अर्थव्यवस्थाओं में बदल दिया गया। गरीब देशों के लोगों को मौत के मुंह में धकेलते हुए हथियारों की खरीद-फरोख्त में शामिल किए। अपने संकट को दूर करने, मुनाफा कमाने आईएमएफ और विश्व बैंक के जरिए अनेकों हथकण्डे अपना रहे हैं। साम्राज्यवाद अपने मुनाफे के लिए मशीनीकरण को मानवजाति के लिए खतरनाक बना दिया है। दुनिया भर में बेरोकटोक बढ़ती बेरोजगारी इसी की देन है। खेती-बाड़ी से लेकर उद्योग-धंधों एवं सेवा, सभी क्षेत्रों को साम्राज्यवाद ने जबर्दस्त जकड़ लिया है। यह सब देशी दलाल पूंजीपतियों एवं सामन्ती वर्गों के जरिए हो रहा है। अपनी बात न मानने वालों पर आर्थिक प्रतिबन्ध से लेकर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हमले कर रहे हैं। साम्राज्यवाद का मतलब है युद्ध। जब तक इसका अस्तित्व रहेगा, दुनिया में अमन-चैन कायम नहीं होगा। फासीवाद भी इसीका परिणाम है।

अमेरिकी साम्राज्यवाद – दुनिया की जनता का अव्वल नम्बर दुश्मन

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान यह किनारे बैठकर हथियार बेचा करता था। दूसरे विश्व युद्ध के आखिर में जापान के शहर हिरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु बमों का प्रयोग करके लाखों लोगों को मौत के घाट उतार दिया था इसने। ऐसा इसने सिर्फ युद्ध के बाद फायदों में हिस्सा पाने के लिए ही किया था। अपनी बात मनवाने और अपना प्रभुत्व बढ़ाने के लिए अमेरिका ने दुनिया भर में कई स्थानीय युद्धों को जन्म दिया। कई देशों के देशाध्यक्षों की हत्या करवाई। कई देशों पर प्रत्यक्ष हमले किए। कई आतंकी गुटों को स्थापित करके सम्बन्धित देशों में सत्ता पलट की कार्यवाहियों को अंजाम दिया। वियत्नाम पर किया गया हमला सबसे ज्यादा अमानवीय एवं पाशविक था। हाल ही में अफगानिस्तान पर, अब इराक पर उसके हमले एवं कब्जा तो दुनिया के सामने जीता-जागता उदाहरण है। अपने राजनीतिक, आर्थिक एवं सैनिक प्रभुत्व को कायम रखने, तेल संसाधनों पर काबिज होने उसने इराक के लाखों लोगों की जानें लीं। इराकी जनता के प्रतिरोध की आग में खत्म होने से खुद को बचाने के लिए वह अब इराकी पुलिस को आगे किया है। साथ ही वह इराक की तबाही से उत्पन्न नए टेन्डरों (ठेकों) का लालच दिखाकर भारत सहित कई देशों की सेनाओं को इराकी जनता के सामने करने की साजिश कर रहा है।

साम्राज्यवाद का ही विरोध करने पर भगत सिंह एवं उनके साथियों को मौत की सजा दी गई थी।

साम्राज्यवाद का ही विरोध करने पर इराक पर कब्जा किया गया एवं उसकी जनता का कत्लेआम किया जा रहा है।

आज भारत में साम्राज्यवाद का विरोध करने के चलते ही अमेरिका ने हमारी पार्टी पर प्रतिबन्ध लगा दिया है क्योंकि हमारी पार्टी दण्डकारण्य की सम्पदाओं की साम्राज्यवादी लूट का विरोध कर रही है। बैलाड़ीला से लेकर रावघाट-चारगांव तक की खदानों से खनिज सम्पदाओं की लूट की खिलाफत के कारण ही साम्राज्यवाद, खासकर अमेरिका बौखला उठा है।

अमेरिकी साम्राज्यवाद न सिर्फ हमारी, बल्कि दुनिया की तमाम क्रान्तिकारी ताकतों को तबाह करने की तैयारी कर रहा है। नेपाल के जनयुद्ध को कुचलने शाही सेना की सहायता कर रही है। लेकिन नेपाल, भारत, फिलिप्पीन्स, पेरू और तुर्की में आगे बढ़ते जनयुद्धों, दुनिया भर में जारी साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलनों की लपटों से ही न केवल अमेरिका साम्राज्यवाद, बल्कि तमाम साम्राज्यवादी ताकतों का सफाया सम्भव होगा।

भगत सिंह के सपनों को साकार करो !

सन् 1947 के बाद से हमारा देश ब्रिटेन, अमेरिका, रूस, जर्मनी, जापान, इटली, फ्रांस, आदि कई साम्राज्यवादी ताकतों की लूट का चरागाह बन गया है। वर्तमान में अमेरिका हमारे जन जीवन पर सबसे ज्यादा हावी है।

साम्राज्यवाद ने ही हमारे देश के सहज सामाजिक परिणाम की प्रक्रिया को अवरुद्ध किया था। उसने यहां के बड़े पूंजीपति वर्ग एवं सामन्ती वर्गों से सांठगांठ कर रखी है। साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और दलाल पूंजीपति वर्ग की दुष्ट तिकड़ी ही भारत के सर्वांगीण विकास के रास्ते में सबसे बड़ी बाधा है। आइए, हम सब इन शोषक शासक वर्गों की इस खूंखार तिकड़ी को ध्वस्त करने की, यानी उसके सशस्त्र बलों को परास्त करके भगत सिंह एवं उसके साथियों के सपनों के समाजवादी भारत की स्थापना के लिए सब कुछ कुरबान करने की शपथ ले लें। यही उनकी बहादुराना शहादत के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजली होगी।

क्रान्तिकारी अभिनन्दन के साथ

दण्डकारण्य स्पेशल जोनल कमेटी

दिनांक : 2 फरवरी 2005 **भाकपा (माओवादी)**

साम्राज्यवाद का सफाया करने सामने आओ !

20 से 23 मार्च तक साम्राज्यवादी विरोधी रैलियों एवं प्रदर्शनों में शामिल होकर इराकी जनता के बहादुराना संघर्ष का समर्थन करो !

प्यारे लोगो,

23 मार्च 1931 – भारत के इतिहास में भुला न देने वाला दिन। 24 वर्ष के एक नौजवान को उसके दो और साथियों के साथ फांसी पर लटका दिया था, ब्रितानी साम्राज्यवादियों ने। वह नौजवान था भगत सिंह और उसके साथी थे राजगुरु और सुखदेव।

20 मार्च 2003 – विश्व इतिहास में भुला न देने वाला दिन। अमेरिकी साम्राज्यवाद ने इराक पर हमला शुरू किया था, जो उस पर कब्जे के बाद आज भी जारी है। यह मध्ययुगीन बर्बरता को भी पीछे छोड़ देने वाला है।

20 मार्च 2003 – बस्तर में सीआरपीएफ का प्रवेश। क्रान्तिकारी जन आन्दोलन पर कहर बरपाने हेतु भारत सरकार ने अपने

भगत सिंह

सुखदेव

राजगुरु

अर्ध सैनिक बलों को संघर्ष इलाकों में भेजा।

74 साल के अन्तराल में घटित उपरोक्त तीनों घटनाएं हालांकि अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग समय में घटित हुईं लेकिन उनकी प्रकृति और परिणाम में एक समानता है। अपनी मातृभूमि की गुलामी की जंज़ीरों को तोड़ने और अंग्रेजी साम्राज्यवादियों को मार भगाने के लिए प्रतिबद्ध क्रान्तिकारी संगठन, हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातांत्रिक सेना के नौजवानों को साम्राज्यवाद ने निगल लिया था। लेकिन इनकी शहादत से साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन थमा नहीं, बल्कि और उग्र हुआ। अन्ततः सन् 1947 में, प्रत्यक्ष रूप से भारत पर शासन करने में नाकाम अंग्रेज अपने भारतीय दलालों को सत्ता सौम्प कर भारत से भाग खड़े हुए। जबकि देश की आजादी के लिए, एक आदमी के द्वारा दूसरे के शोषण को मिटाकर समतामूलक समाज की स्थापना करने के लिए हंसते, खिल-खिलाते फांसी पर झूलने वाले भगत सिंह, राजगुरु एवं सुखदेव आज भी अमर हैं। उनके नाम सुनते ही हर युवा दिल में देश के लिए जान कुरबान करने का जज्बा जाग उठता है।

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के नेतृत्व में बस्तर में जारी जनयुद्ध को कुचलने के लिए भेजे गए सीआरपी बलों ने बस्तर में तबाही मचा रखी है। जन जीवन पर जबर्दस्त दमन चला रहे हैं। लेकिन क्रान्तिकारी जनता माओवादी पार्टी के नेतृत्व में सीआरपीएफ के दमन का बखूबी प्रतिरोध कर रही है। छापामार युद्ध को तेज करते हुए गांवों में जनता ना सरकार गठित करते हुए बस्तर सहित समूचे दण्डकारण्य को आधार इलाका बनाने की दिशा में आगे बढ़ रही है। साम्राज्यवाद के दलाल शासक वर्गों की राजसत्ता पर काबिज होने के लिए कदम बढ़ा रही है।

इराक पर अमेरीका के पाशविक हमले के साथ जनता का बहादुराना प्रतिरोध भी प्रारम्भ हुआ। दुनिया की जनता के पुरजोर विरोध के बावजूद अमेरिका ने इराक पर हमला किया एवं उस पर कब्जा किया। लेकिन जनता के प्रतिरोध की लड़ाई में 2,000 से

(शेष पृष्ठ 41 पर ....)